ज्ञान माला

श्रीमति तटवर्ति राज्यलक्ष्मी

ज्ञान माला

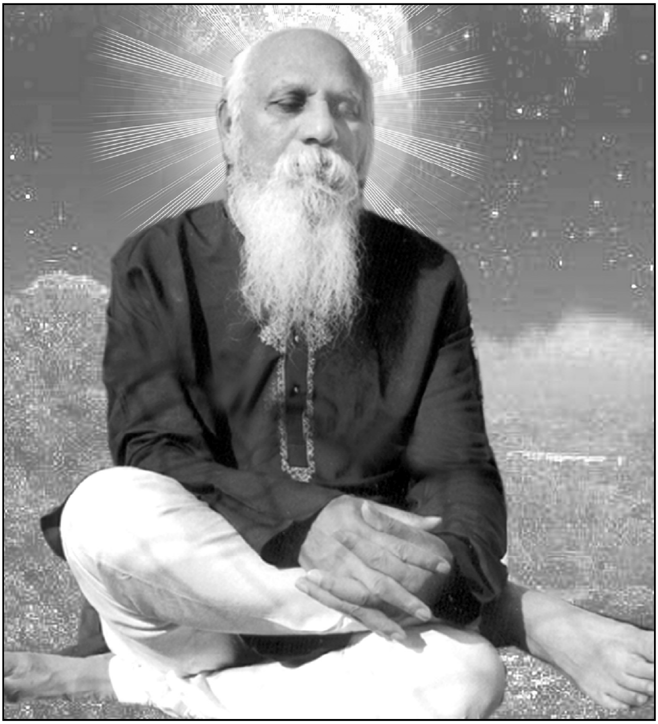

लेखक : तटवर्ति राज्यलक्ष्मी

हिन्दी अनुवादः श्री नागेश्वर राव

For Books Please Contact :
TATAVARTHY VEERA RAGHAVARAO
Tatavarthivari Street, BHIMAVARAM-534201.
W.G.Dist., A.P. Ph: 94403 09812

Rs.70/-

सूची

1. ज्ञान माला 3

2. सामान्य ज्ञान और विशेष ज्ञान। 4

3. परा ज्ञान 11

4. अज्ञानों के बारे में वशिष्ठ महर्षि ने क्या कहा है ? 15

5. कर्मों को कैसे दग्ध करना चाहिए ? 23

6.अहंकार और ममकार को कैसे दूर करना है? 32

7. साधक का अवलक्षणों । 37

8.अगर त्रिकरण शुद्धि होना है तो ? 44

9. बात कैसे होना चाहिए ? 47

10. आशा। 50

11. आलसी तत्व । 53

12. कौन सा साधना सही है? 57

13.आगर आनंद स्थिति में रहना है तो ? 60

For Books Please Contact :

TATAVARTHY VEERA RAGHAVARAO

Tatavarthivari Street, BHIMAVARAM-534201.

W.G.Dist., A.P. Ph: 94403 09812

ज्ञान माला

श्री शंकराचार्य जी, अगर साधना में आगे बढ़ना चाहते हैं तो ? उन्होंने चार विषयों बोध किया है।

1. श्रवणम, 2. मननम, 3.निधि ध्यास, 4.साक्षात्कारना

श्री शंकराचार्य जी ने सबसे पहले श्रवणम कहा था। मतलब कोई भी संदेश को पहले सुनना चाहिए। सुनते हुए उनको लिखना चाहिए। जब हम लिखते हैं, दोबारा हम उनको मनन करने का अवसर मिलता है। मतलब दोबारा पढ़ सकते हैं। अगर नहीं लिखते हैं, उसे कुछ फायदा नहीं है, क्योंकि जब सुनते हैं उसको सुन लेते हैं लेकिन याद नहीं रहता है। इसलिए जरूर लिखना चाहिए।

आध्यात्मिक विद्या, मतलब आत्मा विद्या, अभ्यास करने वालों को जरूर एक किताब और कलम रखना चाहिए। उन दोनों के बिना किसी भी क्लास जाने से कोई फायदा नहीं है। बेकार हो जाता है। वैसे लोग इस मार्ग में आने से या ना आने समान है।

इसलिए जो लिखते हैं, वह मनन कर सकते हैं। मनन करने पर हम समझ सकते हैं। निधि ध्यास का मतलब जो भी समझते हैं, उसे आचरण में लाना। जो भी आचरण करते हैं, जिस लाभ के लिए इस साधना में आए हैं, वह फल उन्हें मिलेगा ।

इस प्रकार श्री शंकराचार्य जी का बोध को हर एक विषय को श्रद्धापूर्वक करेंगे, तब क्या ? आपके अंदर बहुत बदलाव आएगा। आपका व्यवहार बदलेगा, कर्मों बदलते हैं, आपका साधना स्थिति बदल जाएगा, आपका सोचने का तरीका बदलेगा, आखिर आपका जीवन ही बदलेगा।

इसलिए जानना है की महान पुरूष ऐसे वैसे कुछ भी नहीं कहते हैं। सबको अच्छे, लाभदायक, उपयोगी, अच्छा बदलाव के लिए, विषयों ही कहते हैं। इसलिए श्री शंकराचार्य जी का बोधों मामूली विषय है क्या? इसलिए जानने वाले हर एक विषय को, अगर उनको कहने जैसे करेंगे, जीवन में बहुत लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

सामान्य ज्ञान और विशेष ज्ञान।

जितने भी विषयों क्यों न जाने, और जानने वाला ज्ञान रहता ही है। शुरुआत में पढ़ाई को प्रारंभ करने से पहले, एलकेजी में थोड़ा सा जानते हैं, बाद में हाई स्कूल, फिर कॉलेज में, यूनिवर्सिटी में और ज्यादा विवरण में जानते रहते हैं।

अभी हम सब लोग इस ज्ञान को सुन रहे हैं। ऐसे नए विषयों जान रहे हैं। जब से हम आध्यात्मिक जीवन में आए हैं, दो शब्दों को ज्यादा सुन रहे हैं। एक साधना, दूसरा ज्ञान। पूरा आध्यात्मिकता उन्हीं के आधार पर रहता है। हमें, परलोक ज्ञान को, इस भूमि पर रहते हुए ही, जानना होगा।

यह ज्ञान अनंत है। कोई भी वस्तु को अपना 'यथार्थ स्थिति में' जानना ही ज्ञान कहते हैं। अगर किसी के बारे में उसका यथार्थ स्थिति जान सकते हैं, तब इसका ज्ञान आपको मिल गया है! इस यथार्थ स्थिति को जानने की शक्ति, सामान्य लोगों को नहीं होता है। केवल जब आप ध्यान करते हो! अपना मेधा शक्ति बढ़ाते हैं! बुद्धि को विकसित करते हैं! तभी हमें हर एक चीज जिसे देखते हैं उनका यथार्थ स्थिति जानने की शक्ति, हमें प्राप्त होगा।

क्योंकि हम बहुत सालों से ध्यान कर रहे हैं, ज्ञान सुन रहे हैं। इसलिए एक-एक कदम बढ़ते बढ़ते, हम अभी आखिरी कदम तक नहीं पहुंचे हैं सोच कर निराश नहीं होकर, मुझे सीखने को और बहुत है का सोच रखना चाहिए ।

दुनिया में कई प्रकार का ध्यान साधनाएं करवा रहे हैं। और अगर जानना है कौन सा सही साधना है तो ? 'जो साधना परलोक के बारे में, या परमात्मा के बारे में, जानने का शक्ति देता है! वही असली साधना है'। बाकी असली साधनाएं नहीं है । यह विषय, ग्रंथों में कहते हैं। 'श्वास पर ध्यास' ही सही है, पत्री जी ने कई तरह साधनाओं को देखकर, अध्ययन कर कर, इन सब साधनाओं का अभ्यास कर कर, तब वह कहा कि यही सही साधना है। हम भी कई प्रकार के ध्यान देख रहे हैं। लेकिन वह सब परमात्मा का ज्ञान दे

रहे हैं क्या? नहीं है न?

महान लोग सृष्टि के बारे में, परमात्मा के बारे में, ‘अपरा विद्या‘ को, और ‘परा विद्या‘ कहते हैं।

‘परा विद्या‘ मतलब परमात्मा के बारे में बताने वाले विद्या। ‘अपरा विद्या‘ मतलब परमात्मा का सृष्टि के बारे में बताने वाले विद्या।

बड़ों ने पहले ‘अपरा विद्या‘ सीखने को कहा है, बाद में ‘परा विद्या‘ में प्रवेश करना चाहिए। अपरा विद्या के बिना परा विद्या कैसे सीख सकते हैं? इसलिए ऋषियों ने हमें ग्रंथ रूप में दिए हैं। उन्होंने हमें कई धर्मों दिया है, शास्त्रों दिया है, पुराणों दिए हैं। क्यों दिया है? सबको पढ़कर, और सीखने के लिए ही है।

आध्यात्मिक विद्या महान है! लेकिन प्रापंचिक विद्या भी चाहिए। तभी आध्यात्मिक विद्या को पढ़ सकते हैं।

इस संसार में चार प्रकार के ज्ञान है। वह है,

1. सामान्य ज्ञान ।
2. विशेष ज्ञान ।
3. परा ज्ञान ।
4. परमात्मा ज्ञान।

1. सामान्य ज्ञान :- इस संसार में कौन सा वस्तु कैसे उपयोग करना ? को जानना है । उस वस्तु का क्या प्रामुखता है? को सीखते हैं। और हमें बड़ों ने कहा है कि इस लोक में 84 लाखों जीवों और जीव राशियों है।

उनको खनिजों, शिलाओं, वृक्षों, भूचरों, जलचरों, पक्षियों, जानवरों, मानवों जैसे सृष्टि की गई है। इस सृष्टि में शिलाओं हैं। कौन सा शिला, का कौन सा विशेषता है? उनको किस लिए उपयोग करते हैं? इसके अंदर कौन सा पदार्थ है? क्यों सृष्टि किया गया है? ऐसे विषयों को जानना चाहिए।

पूर्व काल में आयुर्वेद शास्त्र को आविष्कार हुआ है। उस में कौन सा पौधे में, क्या-क्या औषधि गुणों है, उन शास्त्र वेत्ताओं को मालूम है। युद्ध में

जब घायल होते हैं, उस पौधे का पत्ता का रस को निकाल कर घायल पर डालने से अगला दिन ही गायब हो जाता था।

इसी प्रकार घायलों के लिए और रोगों के लिए आयुर्वेद में दवाइयां हैं।

इसी प्रकार कहां-कहां पर इस भू गर्भ में, कौन से खनिजों है? को मालूम करना चाहिए। और लोगों को कैसे उपयोग होगा, कितने प्रकार उन्हें उपयोग कर सकते हैं को भी जानना चाहिए।

इस प्रकार प्रपंच ज्ञान में बहुत कुछ सीखने को है। एक प्रकार कह सकते हैं कि भगवान के सृष्टि के बारे में जानने के लिए एक जन्म काफी नहीं है।

इसी प्रकार उड़ने वाली पक्षियों कैसे उड़ रहे हैं? इसी प्रकार चार पैरों वाले जानवरों में, कुछ साधु जानवरों हैं और कुछ क्रूर जानवरों भी है। उनका क्या उपयोग है? ऐसे बहुत विषयों है जानने को। क्योंकि सृष्टि में जो भी है उसका कुछ कारण रहता है। बिना कारण कुछ भी सृष्टि नहीं होता है।

इसलिए बुद्ध भगवान कहते हैं कि इस सृष्टि में कुछ भी निरर्थक नहीं है।

आजकल के डॉक्टरों, अगर मानव शरीर पर अध्ययन नहीं करते होते, तब यह डॉक्टर का पेशा कर पाते हैं क्या ? इसी प्रकार दवाइयां के ऊपर अध्ययन नहीं करते तो, वह दवाई दे सकते हैं क्या?

समुद्र में पानी है, वह भाप बनकर बादलों में बनकर फिर हमें बारिशों देकर, नदियों में बहते हैं। फिर नदियों मानव को फसल उगाने में, और बहुत कुछ जीवों को लाभ देकर, फिर समुद्र में मिल जाता है। मतलब इन नदियों का पानी समुद्र ही पी रहा है समझ लो।

वेदों क्या कहते हैं? इस सृष्टि के बारे में कहते हैं, मतलब एक-एक कैसे हैं? वह ऋग्वेद में कहा गया है। तब 'वेदव्यास जी' हमें क्यों दिया है? यह सब जानकर अंत में यह सब परमात्मा का ही है, को जानने के लिए।

और पूर्व काल में आयुर्वेद शास्त्रवेत्ताओं ने, उस शास्त्रों को पढ़कर,

उनके लक्षणों के आधार पर, उस पौधे को जानकर, ऐसे दवाइयां बनाते थे। तब ऐसे पौधें इस सृष्टि में क्यों दिया गया है ?

पौधें, फलों, सब्जियों, आदि खाने को उपयोग करने वाले पेड़ पौधे हैं। इस प्रकार दवाइयां में उपयोगी पौधे भी इस सृष्टि में है। इतने प्रकार के पेड़ों, पौधे के बारे में जानना ही सामान्य ज्ञान है।

2. विशेष ज्ञान :- विशेष ज्ञान का मतलब 'न्याय' और 'धर्म' के बारे में जानना। मतलब सामान्य ज्ञान दिखने वाले चीजों पर अध्ययन करना, विशेष ज्ञान जो नहीं दिखने वाले न्याय और धर्म के बारे में बताने वाले हैं। तब एक मनुष्य का प्रवर्तन कैसे रहना है? कौन सा आहार लेना है? कैसे व्यवहार करना है? यह सब विशेष ज्ञान में होते हैं।

कोई किसी को हत्या करने पर, शिक्षा मिलती है। न केवल हत्या कोई भी गलती करने पर, पापों करने पर, भगवान के धर्म आधारित शिक्षा मिलती हैं। और अदालतों में भी शिक्षा होता है।

देखिए जब मौत का सजा होता है, उसे करने के लिए जल्लाद होता है। यहां पर उस जल्लाद को फांसी देने का शिक्षा नहीं होता है, कारण वह अपना कार्य निर्वहन कर रहा था, और दूसरा का अपराध है। इसलिए जानना है कि धर्म, हर एक के विषय में अलग रहता है। इसी प्रकार धर्म हर युग में एक जैसा नहीं है। एक-एक युग में अलग-अलग होता रहता है।

महाभारत युद्ध के बाद, भीष्म जी ने श्री कृष्ण से पूछा हे। कृष्ण 'क्या युद्ध पूरी तरह धर्मबद्ध होकर हुआ है ?' । तब श्री कृष्ण कहते हैं की, दादाजी, आपको मालूम नहीं है क्या! धर्मबद्ध होकर हुआ है? या अधर्म तरीके से हुआ है? सामने वाले के हिसाब से धर्म बदलता रहता है।

बात क्या है कि? त्रेता युग में, रावणासुर जी को धार्मिक तरीके से मारना पड़ा। कारण यही है कि रावणासुर जी महान भक्त थे, महान साधना किया है, महान ज्ञान प्राप्त किया है, लेकिन अहंकार के वजह से गलती किया है। तब धार्मिक युद्ध हुआ था।

इस युग में ‘धर्म ही नहीं है’। सामने वालों को हानि करना, माया में फंसना, तंत्र तरीके से उन्हें लूटना, लोग इस स्वभाव से हैं। पांडवों का राज्य उनको नहीं देकर, उनको मारने को भी तैयार हो गया थे। अधर्म तरीके से उन्हें कष्ट दिया है। इतना ही नहीं धर्म को जानते भी अधर्म के पक्ष में रहने वालों को भी ‘अधर्म प्रकार ही मारना चाहिए’। यही द्वापर युग का धर्म है।

कलयुग में, अधर्म करने वालों को कठोर दंड देना चाहिए। यही कलियुग धर्म है। इस प्रकार श्री कृष्ण कहते हैं कि युगों के अनुसार धर्म भी बदलता है।

आजकल प्रपंच में भाइयों के बीच में झगड़ा, पति-पत्नी के बीच में झगड़ा, बाप बेटे के बीच में झगड़ा, उनको पीटने वाले बच्चे, उनके ऊपर दया नहीं करने वाले बेटे हैं, यह धर्म नहीं है।

अधर्म प्रकार व्यवहार करने वालों को भगवान के सृष्टि में दया नहीं होता है।

और धर्म अधर्म जानने वाले, अगर वह गलती करने वालों के पक्ष लेते हैं, तब अधर्म को प्रोत्साहन देना समान है ना? वह भगवान के हिसाब में गलत है ना? इसलिए श्री कृष्ण जी धर्म की ओर रहकर अधर्म के पक्ष वालों को मरवाया है। उस युग धर्म वह था। न केवल उस युग में, कोई भी युग में, प्रापंचिक शिक्षा से बच सकते हो, लेकिन भगवान से नहीं।

इसलिए हर एक को ‘न्याय के बारे में’, ‘धर्म के बारे में’ जानना चाहिए। विशेष ज्ञान में सत्य को जानने को नहीं कहा है।

न्याय क्या है? धर्म क्या है? इन दोनों को विस्तार से जानना चाहिए। मानव को बुद्धि है, सब जान सकता है। कोई भी जानवर न्याय शास्त्र को नहीं पड़ा है। मानव को क्या धर्म है? क्या न्याय है? जानने से किसी से अधर्म तरीके से, अन्याय तरीके से प्रवर्तन नहीं करेगा। इस विशेष ज्ञान में ‘न्याय के बारे में’ और ‘धर्म के बारे में’ कहा गया है।

जब इन दोनों सीखेंगे तभी दुनिया में, संघ के प्रति, संसार, बंधुओं के

प्रति, सब के प्रति धर्म तरीके से व्यवहार रहेगा। देखिए अभी अपने लोगों के गलतियों को क्षमा कर पा रहे हैं, लेकिन और लोगों के विषय में नहीं कर पा रहे हैं। मतलब 'धर्म' समझा नहीं है। 'न्याय' समझा नहीं है।

जब यह दोनों समझेंगे तब अपना पराया नहीं होता और अपनों को भी दंड देने का साहस करेगा। जब हम गलतियां करने वक्त उन्हें समर्थन दे रहे हैं, मतलब हममें अब भी कुछ गलत लक्षण है।

इस आध्यात्मिक जीवन में आने के बाद हर वक्त जागरूकता में रहना चाहिए। मैं कुछ गलत काम कर रहा हूं क्या? अन्याय कर रहा हूं क्या ? अन्य व्यवहार कर रहा हूं क्या? अन्याय बात कर रहा हूं क्या? अधर्म की ओर जा रहा हूं क्या? यह विषयों के बारे में सोचना चाहिए, नहीं तो यह सब कर्मों के रूप में अनुभव करना पड़ेगा।

वशिष्ठ महर्षि का बोधित योग वाशिष्टम को पढ़ने से कर्म सिद्धांत का रहस्य को जानेंगे। जब इन सारे विषयों को पढ़ने पर हर एक क्षण को भयभीत रहना है। क्योंकि? केवल कर्मों ही नहीं, बातों भी कर्मों है।

क्योंकि जो भी सत्य को समर्पण हुआ 'परमात्मा के हिसाब से जो गलत है, वह गलती नहीं करना है'। इसलिए विशेष ज्ञान में क्या बताया है? जीवात्मा को 'न्याय और धर्म' जानकर प्रवर्तन करना चाहिए। कारण भगवान का सृष्टि ही धर्म है।

चाोरी करना अपराध है बताने का कोई जरूरत नहीं है। परमात्मा की दृष्टि में वह गलत है, तभी से है। झूठ बोलना, व्यभिचार करना, शराब पीना, जुआ खेलना पाप है, भागवतम् में कहा है। 'न्याय और धर्म' को तोड़ने वाले जितना भी महान है, शिक्षा मिलेगा जरूर। राक्षसों ने इन दोनों को तोड़े हैं तभी पतन हो गए हैं!

सृष्टि करता अगर सृष्टि किया है उसका कुछ उपयोग है। अगर एक धर्म को रखा है, मतलब उनका पालन करना ही है! धार्मिक व्यक्ति सात्विक गुण में रहता है, अधर्म व्यक्ति रजोगुण में रहता है। उस रजोगुण वाला ध्यान करने

पर भी अपनी ही लाभ के बारे में सोचेगा। सात्विक गुण में रहने वाला, ध्यान करने से धर्म जानकर, विश्व कल्याण के लिए कष्ट करता है।

भगवान के सृष्टि में सब कुछ सीखने लायक ही हैं, उपयोगी हैं, भगवान बेकार में कुछ नहीं सृष्टि करता है। किसी को यह समझना नहीं है कि, क्यों कि वह मुझे नहीं मालूम है, इसलिए उनका उपयोग नहीं है। यह बात सीखना चाहिए। इतना ही नहीं सृष्टि में जो भी है सबको स्वीकारना है। क्योंकि? भगवान की सृष्टि में चींटियां से लेकर, पिपिलादि ब्र्म्हा पर्यन्त सब कुछ उस भगवान का सृष्टि ही है! सब कुछ उपयोगी ही है।

लेकिन जब हमें मालूम नहीं है, हम उसे निरूपयोग समझते हैं। लेकिन इतने प्रकार के 'ज्ञानों' महात्माओं ने विवरण दिए हैं। और वेदों में गणित शास्त्र भी, व्याकरण शास्त्र भी, छंद शास्त्र करके क्यों दिया है ? अगर पढ़ाई नहीं है तब यह सब अध्ययन कैसे करेंगे।

इसलिए इस सृष्टि में हर कुछ, किस जीव को क्या चाहिए, वह सब सृष्टि किया हुआ है। लेकिन, मानव जन्म में सब कुछ जानने का आवश्यकता है। क्योंकि? बुद्धि है, इसलिए इस बुद्धि को उपयोग कर कर, वह सब को सीख कर, आगे बढ़ना चाहिए।

आजकल बहुत टेक्नोलॉजी आई है। अगर पढ़ाई नहीं है, उसे कैसे उपयोग करेंगे? इसलिए इस 'सामान्य ज्ञान' और 'विशेष ज्ञान' जानने का आवश्यकता जरूर है।

परा ज्ञान

अब हम आध्यात्मिक ज्ञान के बारे में जानते हैं। इस आध्यात्मिक ज्ञान दो प्रकार के होते हैं।

1. पराज्ञान 2. परमेश्वर ज्ञान

यह दोनों मानव को जीते हुए ही जानना चाहिए।

पराज्ञान मतलब परलोक का ज्ञान। परमात्मा ज्ञान मतलब परमात्मा के बारे में ज्ञान।

सामान्य मानव को केवल मरने के बाद ही जानता है। उन्हें परलोक में क्या होता है । लेकिन मरने से पहले वह विषय नहीं जानता है। बहुत लोग पूछते हैं अभी उनके बारे में क्यों जानना है? वह कहते हैं भूमि पर रहने वाले विषयों को जानना काफी नहीं है क्या?

लेकिन मरने के बाद क्या होता है? कितने लोकों हैं? ऊपर लोकों में जाना है? या नीचे लोकों में जाना है? यह विषय इस भूमि पर ही जानना चाहिए। मानव जन्म किस लिए है? इस भूमि पर रहते हुए ही जानना चाहिए कि वह कौन है? वह कहां से आया है? वह कहां जाना है? इन विषयों को भी जानना चाहिए।

अगर जानेंगे नहीं, तब फिर से जन्म लेते ही रहेंगे। इसीलिए वेदों में इस ज्ञान के बारे में वहां कहा गया है। क्यों? मतलब हमें जानने के लिए ही है। मगर वह सब न जानकर ही शरीर छोड़ देकर जाएंगे, तब जानने के लिए फिर भूमि पर आना ही है।

इस पराज्ञान में मुख्यतः मानव जन्म लेने से पहले कहां थे? कहां से आए हैं? मरने के बाद, कहां जायेंगे ? इस चराचर जगत कैसे सृष्टि हुआ है? इन 'सृष्टि, स्थिति, लय' कारक कौन है? ऐसे विषयों को जानना चाहिए।

ऐसे प्रश्नों का समाधान सिर्फ ज्ञानी लोग जान सकते हैं। लेकिन सामान्य लोग इनका प्रमुखता नहीं देते हैं। सिर्फ जन्म हुआ है? बड़ा हुआ है?

अनुभव किया है? जा चुके हैं? सिर्फ इनके बारे में सोचते हैं। लेकिन जब पराज्ञान को जानेंगे तब? मानव का जीवन विधान ही बदल जाएगा।

इस ज्ञान मार्ग में आकर ज्ञान प्राप्त करने के बाद, इस सृष्टि में '7 ऊपर लोकों', '7 निम्न लोकों' है, का विषय जानते हैं। इतना ही नहीं, इस मानव जन्म ही नहीं, 84 लाख प्रकार के जन्मों ले चुके हैं का विषय जानते हैं। तब इतने सारे प्रकार के जन्मों क्यों? मतलब आत्माएं, जो मानवों है, को हर एक जन्म में कई प्रकार के अनुभव पाते हुए, पाठों सीखते रहते हैं, का विषय जानते हैं।

मुख्यतः इस आध्यात्मिक मार्ग में आकर, ध्यान कर कर, ज्ञान को बढ़ाते हैं। इसलिए मरने के बाद जाने वाले कितने लोकों हैं ? भूमि पर किए हुए कर्मों आधारित, यहां प्राप्त किया ज्ञान आधारित, किस लोक में जाएंगे? जैसे विषयों जानते हैं।

पुण्य कर्मों करने पर स्वर्ग लोक, पाप कर्मों करने पर नरक लोक को, वैसे ही ध्यान साधना कर कर ज्ञान प्राप्त करने पर और उच्चतम लोक में जाएंगे, का विषय जानेंगे। इतना ही नहीं, मैं शरीर नहीं हूं मैं आत्मा हूं, न केवल मैं, इस सृष्टि में सारे जीवों भी आत्मा ही है, इस पूरी सृष्टि ही परमात्मा है को जानने से सत्य लोक पहुंचेंगे। कोई भी अंत में सत्य लोक ही पहुंचना है।

कारण यही है कि सत्य लोक पहुंच गया का मतलब वह भूमि पर लौट नहीं आने वाले हैं। क्योंकि हर एक व्यक्ति जितना भी जन्म ले लेना, अंत में सत्य लोक में पहुंचना है।

इस चराचर जगत को परमात्मा ने ही सृष्टि किया है। उनसे, पहले पांच भूतों का सृष्टि किया गया है। इन पांच भूतों से ही इस प्रकृति और प्रकृति में जीवों का सृजन और सृष्टि हुआ है।

इसलिए कहते हैं कि सृष्टि में जितने सारे रूपों क्यों न हो वह सब मूल चैतन्य से ही सृजन हुए हैं। इस मूल चैतन्य को ही 'परमात्मा' या 'परम ब्र्म्म'

भी कहते हैं। इसलिए यह पूरी सृष्टि इसी ने किया है का विषय जानना है।

तब इस सृष्टि, स्थिति, लय का कारण भी वही है। लेकिन दुनिया में सोचते हैं कि 'सृष्टि करने वाला ब्र्म्ह है', 'पालन पोषण करने वाला विष्णु है', 'लय करने वाला शिव है'। लेकिन इस 'सृष्टि, स्थिति, लयों' का कारण परमात्मा ही है, उत्तर गीता में, उस परमात्मा ने ही कहा है।

भूमि तत्व में रहते वक्त 'मैं ब्र्म्ह हूं' ।

जल तत्व में रहते वक्त 'मैं विष्णु हूं' ।

अग्नि तत्व में रहते वक्त 'मैं ईश्वर हूं'।

यह तीनों करने वाला 'मैं ही हूं', कहा गया है। इतना ही नहीं, वायु तत्व में 'शिवजी', आकाश तत्व में 'सदा शिव जी', विविध नामों से, रूपों में, इन कार्यक्रमों का निर्वहन करता हूं। ऐसा कहा गया है। इससे जान सकते हैं कि, रूपों और नामों अलग होने पर भी, उन तत्वों में उस परमात्मा ही यह तीनों कार्यक्रमों करते हैं।

इस प्रकार हम जानते रहने पर इस 'परमात्मा ज्ञान' को बढ़ाते हैं।

इसलिए इस सृष्टि का कारण परमात्मा ही है! इस जीवों को सृष्टि का कारण परमात्मा ही है! उच्च लोकों या निम्न लोकों भी, इस परमात्मा ने ही किया है!

मानव लोग उसी परमात्मा से बिंदु रूप में विभाजन होकर भूमि पर आकर जीवों का शरीरों में प्रवेश किया है, और 'मैं' जीव हूं का भाव में रहते हैं। तब वह भावना कब चले जाएंगे ? एक सद्गुरु मिलने के बाद, सही साधना करने पर।

इस प्रकार साधना कर कर, ज्ञान प्राप्त करने पर 'परलोक ज्ञान' को जानता है। उसी प्रकार भूमि पर दुखों अनुभव कर कर, इस सुख, संतोष तत्कालीन है, को जानकर, असली आनंद अपना 'स्व स्थित है' को जानकर, मैं वहां से आया हूं का ज्ञान पाने पर, उस परलोक ज्ञान अच्छी तरह जानता हैं।

इस प्रकार ज्ञान बढ़ने पर, लोक कल्याण कर्मों करते-करते ब्र्म्ह ज्ञान

पाकर सृष्टि में समस्त को जनता है। इसलिए न केवल प्रपंच ज्ञान काफी है, साथ-साथ इस आध्यात्मिक ज्ञान, मतलब परलोक ज्ञान, को भी सीखना चाहिए। हर एक को यह सीखने के लिए, एक सद्‌गुरु का आश्रय करना चाहिए।

इसलिए श्री शंकराचार्य जी ने कहा है, कि , 'मनुष्यत्वं, मुमुक्षत्त्वं, महापुरुष दर्शनं', इस लोक में दुर्लभ है। मतलब मानव जन्म मिलना बहुत कष्ट है। इसी प्रकार मानव जन्म को आखिरी जन्म बनाने का अवसर उस मानव जन्म को ही है। इसलिए मुमुक्षत्वं मतलब मोक्ष पाने का इच्छा होना भी इतना आसान नहीं है। क्योंकि ? कोई भी इस भूमि पर अच्छी तरह से, आराम से, संतोष से जीवित रहने का इच्छा रहता है, और मोक्ष पाने को इच्छा होना ही मुश्किल है।

लेकिन इन दोनों इच्छाओं रहने पर भी, एक महान पुरुष मतलब एक सद्‌गुरु मिलना बहुत ही मुश्किल है। यह तीनों जिनके पास है उनसे बड़ी भाग्यशाली और दूसरा कोई नहीं होता है।

क्योंकि? मानव, माया के वश में आकर, दुखों में, कष्टों से, समस्याओं से संघर्ष करता रहता है। इसलिए भागवतम में कहा गया है कि, अगर मुझे पहुंचना है तो, मेरे माया के ऊपर विजय प्राप्त करना है। उस केलिए 'श्वास पर ध्यास' ध्यान ही एक मार्ग है।

ऐसे ही सद्‌गुरु का बोध से ध्यान साधना कर कर, पराज्ञान, परमात्मा ज्ञान प्राप्त कर कर, अंत में मोक्ष पाते हैं। इसलिए हर कोई 'श्वास पर ध्यास' ध्यान करना चाहिए।

अज्ञानों के बारे में वशिष्ठ महर्षि ने क्या कहा है ?

बहुत लोग समझते हैं कि ध्यान कर कर पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने पर मोक्ष पा सकते हैं। लेकिन मोक्ष पाने पर भी वह पूर्ण पुरुष नहीं बन सकते हैं। सिर्फ अपने तरह भूमि पर कुछ लोगों को तैयार करने से ही पूर्ण पुरुष बनेंगे। यह बात 'सूत पुराण' में शिवजी ऋषियों को कहते हैं।

इसलिए भूमि पर जितना प्राप्त किए हैं, वह विश्व को देना चाहिए। नहीं तो फिर से भूमि पर आना पड़ेगा। यह 'प्रकृति का सिद्धांत' है। इसी को पत्री जी 'तीर्थांकर गोत्र बंधन' कहते हैं। मतलब मानव जो भी प्राप्त किया है हर एक विषय को दूसरे को बांटना ही चाहिए। यही मोक्ष है।

पत्री जी ने तीन लोगों के बारे में कहते रहते हैं।

1. अरिहंत। 2. बोधिसत्व। 3.बुद्धा।

1.अरिहंत मतलब खुद अपना साधना करता रहता है।

2.बोधि सत्त्व मतलब जो भी उनके पास आता है उनको ध्यान और ज्ञान बोधन करता है।

3.बुद्धा मतलब खुद दूसरों के पास जाकर बोधन करता है।

इनमें से बुद्धा ही महान है।

जो भी हम सुने हैं, किताबें में पड़े हैं, बाहर जाकर दूसरों को बताने से ही हम में ज्ञान बढ़ता है। इसलिए पत्री जी का कहना है कि 'बांटने से ही बढ़ता रहता है'।

लेकिन किसी को अगर नहीं बतायेंगे तब भूल जाते हैं, हमें कुछ भी याद नहीं रहेगा। जो कुछ भी आप पढ़े हैं, अपने मस्तक में डालने पर ही, वह याद रहेगी। जब क्लास में जाते हैं तब वह याद आयेगी। तबी आप बता सकते हैं।

कब कैसे रहेंगे किसी को मालूम नहीं है। कल हमारा नहीं है, सिर्फ आज का दिन हमारा है। इसलिए जितना बता सकते हो उतना बताना चाहिए।

जो बताना है वही बताने पर ही हम सही तरीके से आगे बढ़ते हैं। अगर आप पाने वाले ज्ञान दूसरों को नहीं बताकर, सिर्फ बैठकर ध्यान करने से पूर्ण ज्ञानी नहीं बनेंगे।

अज्ञानी को जितना भी ज्ञान बोध करते हैं, उन्हें लगता है कि आप उसे बंधक बनाकर बताया जा रहा है।

इसलिए वशिष्ठ महर्षि ने चार विषयों कहा है।

1. जिसको विवेक नहीं है, उसे शास्त्र भारी लगता है।

2. जिसको वैराग्य नहीं है, उसे ज्ञान भारी लगता है।

3. जिसे शांति नहीं है, उसे मन भारी लगता है।

4. जिसे आत्मज्ञान नहीं है, उसे शरीर भारी लगता है।

यह सारे विषयों अज्ञानी को जरूर रहते हैं। उनके बारे में अभी जानते हैं।

1.जिसको विवेक नहीं है उसे शास्त्र भारी लगता है :- क्योंकि वह जानता नहीं क्या - सही - क्या गलत, धर्म - अधर्म क्या है, न्याय - अन्याय क्या है, सक्रम - अक्रम क्या है, सत्य- असत्य क्या है, विवेक नहीं होने वाला जानता नहीं है। यह सब ध्यान कर कर, विवेक प्राप्त कर कर, शास्त्र अध्ययन करने वालों को जानता है।

भगवत गीता, भागवतम पढ़ने पर पांच महापापों के बारे में जानते हैं।

1.शराब पीना, 2.जुआ खेलना, 3.व्यभिचार करना, 4. झूठ बोलना, 5. हिंसा करना।

यह सारे पांच महापापों हैं। इनकी वजह से कितना कष्टों, बाधाएं अनुभव करना पड़ेगा, अगर सोचेगा तब वह पांच महापापों को नहीं करता है।

इसलिए क्या सही क्या गलत सिर्फ शास्त्रों को पढ़ाई करने से ही मालूम होगा। सिर्फ एक भागवत गीता काफी है अपना जीवन बदलने के लिए। ऐसे भागवत गीता का एक भी श्लोक नहीं पड़ने वाला, मूर्ख, इस कलियुग में है।

उन्हें एक ही मालूम है ! करोड़ों करोड़ों पैसे लूटना और छुपाने को।

जब शास्त्रों को पढ़ेंगे तब समझेंगे धर्म क्या है। लेकिन लोगों को पढ़ने के लिए इतना विवेक नहीं है। इसलिए अज्ञानी लोगों को विवेक न होने से शास्त्रों को निरुप्रयोग समझ रहे हैं। एक ही बात में कहते हैं कि उसको पढ़ने से भी हमें समझ नहीं आएगा।

लेकिन जितना भी अज्ञानी है उस के लिए थोड़ा समय देना चाहिए। ध्यान कर कर, ज्ञान प्राप्त करने से हर एक के जीवन में आनंद ही होगा।

इसलिए वशिष्ठ महर्षि कहते हैं कि अविवेकी को 'इन शास्त्रों भारी लगता है' । क्योंकि ? शास्त्रों उन्हें समझ नहीं आता है, आचरण नहीं कर सकता है। ऐसे ही अज्ञानता में बह जाता है।

उनका परिस्थिति कैसे होता है ? एक बजन में फंसे हुए वाली जैसे। जैसे एक बजन से नही निकल पाते है, यह लोग भी अपने कष्टों और दुखों का बजन मे फस जाते है।

2.वैराग्य न होने वालों को ज्ञान भारी होता है:-

अज्ञानता में रहने वालों को हर एक चीज पर ममता रखते हैं। प्रपंच में सारे चीजों हमें भोगने के लिए ही रखा है, का सोच रखते हैं। अपने इंद्रियों को सिर्फ भोगने के लिए ही उपयोग करता है। इतना ही नहीं मैं शरीर नहीं हूं, मैं आत्मा हूं का ज्ञान भी पाने को इच्छा भी नहीं दिखाता है। तब इन्हें ज्ञान कैसे प्राप्त होगा।

उनको जितना भी कहोगे, यह समझ नहीं आता है कि इस दुनिया असत्य है, आत्मा ही सत्य है। इस प्रकार प्रपंच पर इतना इष्ठता बढ़ाकर, इंद्रियों का दासी बन जाता है। जितना भी कहें, उस इंद्रियों का दासी नहीं रहने वाला, बहुत ही कम होते हैं। इसीलिए जब आंखों बंद कर कर प्रपंच को छोडते हो, तब आपका साधना ठीक से होगा और ज्ञान को प्राप्त करेगा।

जब तक दुनिया पर वैराग्य नहीं होगा तब तक ज्ञान बहुत कष्ट लगेगा, और भारी होता है। देखिए एक शादी में या पार्टी में जाते हैं या सिनेमा को। ऐसे

कई घंटों बिताते हैं। लेकिन ध्यान के लिए कितने घंटों दे रहे हैं ? सोचिए!

जब आपके इंद्रियों पर ममता कम होने पर, प्रपंच पर ममता कम होने लगा, ध्यान लगने पर ज्ञान प्राप्त होगा। इसलिए ज़रा सा भी वैराग्य रहने पर, बहुत कुछ प्राप्त कर सकते हैं। लेकिन हर दिन आपका आयु कम होता है, बाल सफेद होते हैं, दांतों निकलते हैं, मृत्यु के पास चलते हैं। ऐसे बूढ़ा होने से भी इस प्रपंच को ही पकड़ रहे हो, लेकिन परमात्मा को पकड़ नहीं पा रहे हो।

अज्ञानी, जब कोई मरता है, वह समझता है कि वह चला गया है। लेकिन खुद को अमर समझता है।

अज्ञानी, प्रपंच को शाश्वत समझता है, लेकिन अगर प्रपंच अशाश्वत मानता है, तब वैराग्य होगा। जब तक उस वैराग्य नहीं है तब तक ज्ञान नहीं बढ़ेगा। इसीलिए कहते हैं कि जिसे वैराग्य नहीं होगा, उसे ज्ञान भरी रहता है।

3. शांति नहीं होने पर मनस भारी रहता हैः-

किसको शांति नहीं होता है ? मतलब जिसको संतुष्टि नहीं है उन्हें शांति नहीं होता है। एक समय बहुत ही गरीबी में एक समय खाना खाने को कष्ट रहता था, लेकिन अब मुझे दो बार खाने को है, तबसे मेरा जीवन बहुत बेहतर हुआ समझेंगे तो आप संतुष्ट रहेंगे । लेकिन पड़ोसी का करोड़ों देख कर, तुलना करेंगे तो आप असंतुष्टि से ही अशांति में रहेंगे। ऐसे अशांति से मनस को भारी लगता है।

दुख में भी मनस भारी लगता है। सिर्फ शांति में रहने से ही मनस हल्का रहता है। असंतुष्टि में सही व्यवहार नहीं रहता है, कुछ भी नहीं कर सकते हो, हर एक विषय के लिए दुखी रहते हो। इसीलिए मलयाल स्वामी क्या कहते हैं? गाड़ी नहीं है सोच कर दुख मत रहो, खुश रहो कि आपका पैरों है। तब आप संतुष्ट रहेगा, शांति से जिएंगे ।

4. आत्मज्ञान नहीं होने वाले को शरीर भारी लगता हैः-

आत्म ज्ञान होने से समझेंगे कि इस शरीर को क्यों लाया है। हर एक ज्ञानी को मालूम है। इस शरीर को इस स्थिति से उच्च स्थिति पहुंचने के लिए,

और जीवन का लक्ष्य पाने के लिए ही है। जब ज्ञान नहीं होता,तब कष्टों को श्राप मानते हैं, लेकिन ज्ञान पाने पर कोई भी कष्ट को वरदान मानते हैं।

अगर इस साल एक लाख का लाभ मिला और अगला साल 10 लाख चाहिए, तब उसके लिए उसी हिसाब से कष्ट करना है न। तभी पैसा मिलेगा। इसी प्रकार अगर आत्म ज्ञान चाहिए तब इस शरीर से कष्ट कर कर ध्यान साधना करना चाहिए, ज्ञान को बढ़ाना चाहिए।

जो भी कष्ट नहीं कर सकते हैं और अगर आलसी रहेगा ज्ञान नहीं पाएगा, तब प्रारब्ध कर्मों को अनुभव करना पड़ेगा।

तब कष्टों को नहीं सहन करने वाले, शरीर को हानि पहुंचाकर, मतलब आत्म हत्या करने वाले, पूरा कष्ट शरीर का ही समझते हैं।

क्योंकि उन्हें ज्ञान नहीं है इन कष्टों को सहन नहीं पा रहा हूं, मेरे पति के वजह से कष्टों है, कोई पत्नी के वजह से कष्टों है, कोई मुझे अपमान किया है, परीक्षा में असफल हुआ है करके, यह सब करते हैं। आजकल बच्चों को एक रैंक कम होने से ही आत्महत्या कर रहे हैं। क्योंकि उन बच्चों को ज्ञान नहीं है। अगर ज्ञान होता उन्हें मालूम होता है कैसे जीना है।

एक से बढ़कर एक महान बनने के लिए धन कमाने पर दृष्टि लगाते हैं, लेकिन ज़रा सा भी ज्ञान पाने को सोच नहीं रखते हैं।

ज्ञान के वजह से हम जान सकते हैं कि यह शरीर किस लिए लाए हैं, समझेंगे कैसे जीना है, और जानेंगे कितना आनंद में जीवन बिता सकते हैं। अधिकतम में, कमियों में, कष्टों में, सुख में, अपमानों में, प्रशंसाओं में, सब में समस्थिति में रहकर, जीवन को आनंद में गुज़र सकते हैं।

इसीलिए आत्मज्ञान नहीं रहने पर शरीर भारी लगता ता है। और सोचते हैं किस लिए यह शरीर है। मृताहार मतलब मांसाहार खाते हुए, शराब पीने से इस शरीर खराब करते हैं। ऐसे मत कर कर इस शरीर को सावधानी से रखेंगे, तब ध्यान साधना अच्छा रहेगा, ज्ञान भी बढ़ेगा। भागवत गीता में भी वह कहा गया है न ।

अज्ञानी लोग योग में रखने वाले शरीर को भोग में रखकर शरीर को रोगमय करने से यह शरीर भारी लगता है। लेकिन एक ज्ञानी कोई भी कष्ट आने पर कर्म चले जाएंगे सोचकर, मेरा बाकी खत्म हो रहा है समझ कर, संतोष में कर्मों को अनुभव करता है। इसलिए अज्ञानी को, इस ज्ञान न होने से, इस शरीर भारी लगता है।

जब अज्ञानता में रहते हैं तब मुझे शांति नहीं है कहकर, अपना जीवन पर निराश होता है। इसलिए बड़ों को क्यों सुनना है? शास्त्रों को क्यों पढ़ना है? क्योंकि हमें जानने को हम किस स्थिति में है। ज्ञान पाने के बाद प्रपंच पर वैराग्य, और आत्मा पर ममता होता है। ऐसे लोगों को शरीर, भारी नहीं लगता है।

बानो की सैया पर लेटने वाला भीष्म जी ने धर्मराज को अनेक उपदेशों किया है। लेकिन एक दिन भीष्म जी को देखने आए बृहस्पति जी से, धर्मराज एक प्रश्न पूछता है।

'ध्यान, इंद्रियों पर निग्रहण, अहिंसा, गुरु समर्पण, नित्य अनुष्ठान, तपस्या', इन 6 में से कौन सा उत्तमोउत्तम है?

तब बृहस्पति जी ने उत्तर देते कहते हैं कि इन छह भी महान है, लेकिन उनमें 'अहिंसा' उत्तमोउत्तम है। और भीष्म जी से छुट्टी लेकर देवलोक को चले जाते हैं।

बृहस्पति का समाधान सुनकर धर्मराज ने अहिंसा के बारे में और जानना चाहते थे। तब भीष्म जी से..... पितामहा, मुनीश्वर लोग एक ही आवाज़ में कहते हैं कि अहिंसा उत्तमोउत्तम है। वह इतना महान क्यों है? पूछता है ।

तब भीष्म जी कहते हैं कि मांस भक्षण महापाप समान है। लेकिन मांस का रुचि आदत होने वाला कभी उसको छोड़ नहीं पाता है। इसीलिए मांस खाना छोड़ना ही आर्यों ने अहिंसा माने हैं।

भीष्म जी आगे कहते हुए धर्मराजा ! मांस भक्षण छोड़ना अश्वमेध यज्ञ

से भी महान है, और उन्हें वध करना और वध करने को कहना, दोनों महापाप है।

और कहते हैं मांस बहुत ही रुचि रहता है। इसलिए उसे सब लोग इष्ट करते हैं। ऐसे इष्ट वाला रुचि को छोड़कर, मांस भक्षण छोड़ने वाले देवताओं का समान है। ऐसे बड़ों का कहना है।

पत्थरों में, पेड़ों में, मांस नहीं मिलता है। सिर्फ प्राणियों में ही मिलता है! जब वह प्राणियों का शरीर काटते वक्त, अपना शरीर भी वैसा ही है का सोच, अगर मनुष्य रखेगा, तब ऐसे काम दोबारा नहीं करेगा।

जब मांस का भोजन छोड़ते हैं उनमें हिंसा प्रवृत्ति खुद ही खत्म होता है। मांसाहार छोड़ने पर आयु आरोग्य बढ़ते हैं, ऐसे कहते हैं मारकंडेय महर्षि जी। मांसाहार छोड़ने पर ही देवताओं ने राक्षसों को आसानी से जीत पाए हैं।

दान, धर्म, यज्ञ, यागों ... सब अहिंसा के सामने बहुत छोटे हैं। 100 सालों को तपस्या और मांसाहार को छोड़ना दोनों समान है। ऐसे बड़े लोगों को कहना है।

तपस्या, दान, धर्मों से ब्र्ह्मलोक को पहुंच सकते हैं, या नहीं भी। लेकिन मांस को नहीं छूकर, साधना कर कर, ब्र्ह्मलोक आसान से प्राप्त होता है। ऐसे कहा है भीष्म जी ने। ऐसे कई मांसाहार संबंधित विषयों, अहिंसा पर भीष्म जी विवरण दिया है।

तब धर्मराज पूछता है कि भीष्म जी अगर उतना महानता है मांसाहार को छोड़ने पर, लोगों क्यों नहीं छोड़ रहे हैं?

भीष्म जी समाधान देते हुए कहते हैं कि, क्यों की इसमें मिला हुआ नमक, मसाला, मिर्ची, महारुचि लगता है। इतना ही नहीं मांस खाने से बलवानी बनते हैं का सोच मानवों में है। उन्हें लगता है कि जितना भी दूर पैदल चले, वह थकते नहीं है। इसीलिए उनको नहीं छोड़ते हैं।

लेकिन प्राण भय, सारे जीवों के लिए समान है! तभी दूसरे प्राणियों के ऊपर दया होना चाहिए। ऐसे करने वालों को ब्र्ह्मलोक आसानी से पहुंच जाते

हैं। ऐसे कहते हुए भीष्म जी जन्म मरण के संबंधित एक कीटक और वेदव्यास जी के बीच संवाद के बारे में धर्मराज को बताते हैं।

एक दिन व्यास जी रथ पर सवार करते हुए समय, रास्ते में एक कीटक ने उसे देखकर जल्दी रास्ता को पार करने का प्रयत्न करता है। वेदव्यास ने उस कीटक को देखा है, रथ को रोक कर, उस कीटक को बोलने का शक्ति देकर, उसे पूछता है..... क्यों इतना जल्दी में पार कर रहे हो ?

तब वह कीटक जवाब देते कहता है कि, क्या कहूं मुनींद्रा ! आपके रथ के नीचे कुचलकर मेरा प्राण निकलने वाला है न? तब व्यास जी पूछते हैं कि आप जैसे इतना छोटा कीटक को भी प्राण पर भय है क्या?

तब वह कीटक जवाब देते कहता है कि.... महात्मा किसी भी प्राणी को अपना जिंदगी से महा सुख है। और मौत अनिर्वचनीय दुखमय है। इस दुख को मै सहन नहीं कर सकता हूं। मुझे मरना पसंद नहीं है, इसलिए मैं भाग रहा था। प्राण भीती से परम आंदोलन मय किस में है? ऐसे व्यास जी से कहती है।

तब व्यास जी पूछते हैं कि आप जैसे जीवों को भी इंद्रीय सुख होता है क्या? अगर हो भी तो कितना होता है? तुम्हारे जीने से क्या प्रायोजन है?

तब वह कीटक कहता है क्या मुनेंद्र इतनी बड़ी बात कहे हो। जैसे कीटकों को इंद्रीय सुख नहीं होता है। हमें अपना स्थाई पर इंद्रीयों का सुख होता है। हमें जो अच्छा लगा, खाकर आनंदित होते हैं, अपने पसंद को देखते हैं, हमें संतान होता है। वह सबी हम अनुभव करते है तभी मौत से डरते हैं। ऐसे कीटक कहती हैं।

भीष्म जी यह विषय बताते हुए ...... इसलिए कोई भी जीव को मारना नहीं है, हिंसा नहीं करना, अहिंसा ही पालन करना चाहिए। इसीलिए बृहस्पति जी ने कहा है की अहिंसा उत्तमोउत्तम है। ऐसे कहा है भीष्म जी।

कर्मों को कैसे दग्ध करना चाहिए ?

मानव लोग जीवन में सुखमय, संतोषजनक रहने को प्रयत्न करते रहते हैं। कुछ लोग संतोषजनक रहते हैं। लेकिन कुछ लोग दुखी में, बाधाओं में रहते हैं। इस केलिए अपना किए हुए कर्मों ही कारण है।

कहते हैं मानव जन्म बहुत महान है। इतना ही नहीं मानव जन्म मिलना ही दुर्लभ है। क्यों कहते हैं अभी जानते हैं।

इन जन्मों तीन प्रकार के होते हैं।

1. देव जन्म, 2.जानवर जन्म, 3.मानव जन्म।

ज्यादा पुण्य करने से देव जन्म, और ज्यादा पाप करने से जानवर जन्म, पापों और पुण्य दोनों करने पर मानव जन्म मिलता है। मगर यह मानव जन्म ही महान कैसे हुआ ?

जब देव जन्म लेते हैं, वहां स्थूल शरीर नहीं होता है। इसलिए फिर से परमात्मा के लिए साधना और सेवाएं करने का मौका नहीं है। सिर्फ भोगने का ही अवसर वहां होता है। वहां परमात्मा के लिए साधना और सेवाएं करने का शरीर नही होता हैं। लेकिन साधना अधिक करने का और परमात्मा को जानने का स्थिति वहां नहीं है।

तब जानवर जन्म क्या है? इस जन्म भी मोक्ष पाने को और परमात्मा को जानने का अवसर नहीं होता है। यहां पर शरीर रहता है लेकिन बुद्धि नहीं होता है। इसीलिए जानवर जन्म में भी परमात्मा को नहीं जान सकते हैं।

सिर्फ एक मानव जन्म में ही साधना करने का शरीर, समझ, बुद्धि, सब होते हैं। तभी मानव जन्म में ही सही साधना करने को और मोक्ष पाने का अवसर होता है। इसीलिए मानव जन्म ही महान है और अद्भुत जन्म कहते हैं। इसलिए कहते हैं की ऐसे जन्म मिलना भी दुर्लभ है।

तब इस मानव जन्म को मिलने के बाद कुछ जन्मों तमोगुण में, कुछ जन्मों रजोगुण में, और कुछ जन्मों सात्विक गुण में रहकर, उन गुणों अनुसार

कर्मों करते रहते हैं। पाप कर्मों करते वक्त अच्छा लगता है लेकिन उस कर्मों का फल अनुभव करते वक्त बहुत दुख होता है।

तभी इन कर्मों का दो प्रकार विभाजन किया है। वह क्या है?

1.विषय कर्मों, 2.श्रेया कर्मों ।

विषय कर्मों तमोगुण और रजोगुण में करते हैं। प्रापंचिकता में विषयों पर आशक्ति को प्रामुखता देकर, इन कर्मों करते हैं। इन कर्मों ही बंधनाओं को बढ़ाते हैं और वही अगला जन्म का कारण होता है।

इसी प्रकार आत्मा के लिए और आत्मा का उन्नति के लिए करने वाले कर्मों को श्रेयो कर्मों कहते हैं। मतलब कोई भी कर्म आत्मा के लिए करने वाला, बंधनों से विमुक्ति करती है। लेकिन कोई भी अपने जीवन में एक सद्गुरु आने के बाद ही कैसे कर्मों करना है सीखते हैं।

श्रेयो कर्मों करते समय आत्मा के बारे में ही सोचते रहते हैं। इसी प्रकार विषय कर्मों में आत्मा को बेखातर करते हैं। यहां पर जितना भी महान है, कोई भी, भगवान का कर्म सिद्धांत लागू होता है। इसीलिए जानना है कि कर्मों के आधारित ही उनके फल होते हैं। उसमें कोई छूट नहीं होता है।

और इन बंधनों के वजह से कुछ कर्मों को साथ लेकर, जन्म जन्मों में सुखों और दुखों का अनुभव करते हैं। इस शरीर कर्मों के अनुसार ही आया है। पापों हो, या पुण्य हो, शरीर मिलता है। लेकिन एक सद्गुरु आने के बाद ही कैसे कर्मों करना है सीखते हैं। क्योंकि सिर्फ एक सद्गुरु ही सत्य को बता सकता है। जो सत्य बताते हैं वही जन्म को कैसे सार्थक बना सकते हैं, वह कह सकता है।

लेकिन तब तक पैसों में ही सुख है, या पति-पत्नी में है, या बच्चों में होते हैं, ऐसे समझ कर सब लोग अपने घरों के लिए, धन के लिए ही चिंतित करते हैं।

लेकिन आध्यात्मिक मार्ग में आने तक क्या शाश्वत है क्या अशास्वत है, भी नहीं जानते हैं। लेकिन इस मार्ग में आने के बाद जानते हैं कि जो भी इस सृष्टि में सृष्टि किए हैं वह सभी अशाश्वत है। सिर्फ आत्मा ही शाश्वत है।

तब से श्रेयो कर्मो ज्यादा करते रहते हैं। जैसे भी हो पहले जानना जरूरी है कि कर्मो से अछूत रहने के लिए क्या करना है।

कर्मो तीन प्रकार के हैं। प्रस्तुत करने वाली आगामी कर्मो है। आपके खाते में रहने वाले संचित कर्मो कहते हैं। ऐसे ही कुछ उनमें से लेकर आए कर्मो ही प्रारब्ध कर्मो कहते हैं। इन प्रारब्ध कर्मो से कोई बच नहीं सकता है।

1. आगामी कर्मो :

यह शरीर लेने के बाद करने वाले कर्मो को आगामी कर्मो कहते हैं। जो अभी कर रहे हैं, देखना है कि इनका भविष्य में हमे लाभदायक हो। इसलिए हमारे हर एक कर्म लोक कल्याण के लिए होना है।

इस आध्यात्मिक मार्ग में आने के बाद कैसे कर्मो करना चाहिए? कर्म करते वक्त किस भाव में करना चाहिए? यह जानते हैं अभी।

पिछले जन्मों में कैसे किया है वह नहीं। अभी वर्तमान समय में हमारे कर्मो किस भाव से करना है मुख्य है। मुख्यतः कतृत्व भाव बिना करना चाहिए। मतलब मैं कर रहा हूं का भाव नहीं रहना है और मेरे से करवा रहा है का भाव रखना है।

अभी एक बात बताने पर भी या एक काम करने पर शरीर के अंदर आत्मा रहने से ही कर पा रहे हैं। इसी प्रकार ध्यान साधना करने से या क्लास बताने पर, हर विषय पर, शरीर में आत्मा है तभी कर रहा है। इस आत्मा ही भगवान है, और वही करवा रहा है का भाव रखना चाहिए।

अभी आपने बहुत बड़ा यज्ञ किया है। अगर आप सोचेंगे कि मैं कर रहा हूं, तब पुण्य मिलेगा। अगर सोचेंगे कि वह लोक कल्याण के लिए करने वाला महायज्ञ है, तब बंधन नहीं होता और आपका संचित में नहीं जाता है।

ऐसे नहीं है कि आप पाप भी कर रहे हैं। और पाप अपने स्वार्थ के लिए ही कर रहे हैं। देखिए अगर अपने स्वार्थ के लिए किसी को मारते हो तब वह पाप है। लेकिन युद्ध में देश को बचाने के लिए मारते हैं, तब वह पाप नहीं है। क्योंकि? देश के लोगों को रक्षा करने के लिए मारते हो, क्योंकि देश के

लोगों सुख और शांति में रहने के लिए किया है।

जब धर्मराज से झूठ बोलने को कहा श्री कृष्ण जी ने, मगर वह पाप श्री कृष्ण को नहीं मिलेगा क्योंकि वह धर्म स्थापना के लिए किया है। इसलिए कहते हैं कि काम्या कर्मों नहीं कर्तव्य कर्मों करना चाहिए। काम्य कर्मों मतलब फल को आशा करने वाले कर्मों। लेकिन कर्तव्य कर्मों मतलब वहां अपना कर्तव्य के लिए किया हुआ कर्मों है। श्री कृष्ण जी युद्ध करवाया था, मतलब दुष्ट लोगों का शिक्षा मिलना है, और धर्म का स्थापना होना है।

यहां पर आप ध्यान कर रहे हैं मतलब आपका प्रणालीका में भाग है। ज्ञान प्राप्त करना भी आपका ही प्रणालिका में है। ध्यान और ज्ञान सबको बांटना भी आपका प्रणालिका में है। यह सब यह सब मेरे प्रणालिका में भाग है तभी मैं कर रहा हूं का सोच रखना है, तब कर्मफल आपको नहीं छूता है।

इसलिए आगामी कर्मों को जन्म कारक नहीं बनना चाहिए और संचितों में भी शामिल नहीं होना चाहिए। इसलिए श्री कृष्ण जी कहते हैं की निरंतर कर्म करो, लेकिन उसका फल को त्याग करो।

क्योंकि ? मोक्ष पाना चाहिए। मतलब पाप भी नहीं रहना चाहिए और पुण्य भी नहीं होना चाहिए। कोई भी चिपकाना नहीं चाहिए और निस्संगत्व में रहना चाहिए।

दुनिया में हर वक्त सिर्फ इस शरीर को ही प्राथमिकता देकर क्योंकि मैं कर रहा हूं, मैं कह रहा हूं, मैं सुन रहा हूं, सोचकर रहने से वह काम्य कर्मों हो जाते हैं। वही काम्य कर्मों ही बंधन बनाकर जन्म का कारक होता है।

कोई भी मानव जब कहते हैं कि मैं इस दुख को सहन नहीं पा रहा हूं, तभी एक सद्गुरु आता है। तब गुरु ही बताएगा कर्म कैसे करना चाहिए। कैसे करने से आपको फल नहीं चिपकेगा। इसलिए अगर कोई भी, दुखों से बाहर निकलना है तो ? मुख्यतः याद रखना है कि, मैं गुरु से सीखा हूं, मुझे विषय कर्मों नहीं, काम्य कर्मों नहीं..... बल्कि कर्तव्य कर्मों, श्रेयो कर्मों करना चाहिए।

इसलिए बिना कर्तत्व भावना, लोक कल्याण के लिए करने वाले हर

कर्म कर्तव्य कर्म और श्रेयो कर्म ही है। इस प्रकार जब आप श्रेयो कर्मों करते हैं, तब आगामी कर्मों मतलब इस जन्म में करने वाला कर्मों कोई भी संचितों में नहीं शामिल होगा।

असलियत में ध्यान साधना किस लिए? मतलब आपके इंद्रियों पर नियंत्रण लाने के लिए। अगर आपने नहीं देखना है तो नहीं देखना है, सुनना नहीं है मतलब सुनना नहीं ,बात नहीं करना है तो मतलब बात नहीं करना है। इसी को इंद्रियों का नियंत्रण में रखने को कहते हैं।

इसीलिए कैसे कर्मों करना है, करते वक्त किस भाव से करना है, यह सब गुरुद्वारा मालूम कर सकते हैं। ऐसे जानकर करने वाले कर्मों आपका बंधन नहीं बनेगा, जन्म का कारक नहीं होगा। इतना ही नहीं गुरु से सीखा हुए ज्ञान को बढ़ाने पर उसी ज्ञान को दूसरों को बांटना चाहिए। आध्यात्मिकता मतलब जो पाया है वह दूसरों को देना है। वही हमारा उन्नति का कारण होता है।

२. प्रारब्ध कर्मो :

शरीर लेने के बाद जो भी कर्मों अनुभव करने को लेकर आते हैं, वह प्रारब्ध कर्मों कहते हैं। मतलब प्रस्तुत में जो भी कर्मों अनुभव कर रहे हैं वह सभी निर्णय कर कर भूमि पर आए हैं। इन प्रारब्ध कर्मों को जरूर अनुभव करना चाहिए। जीवन में संतोष हो, या दुख, आनंद हो, या कीर्ती हो, या अपकीर्रती हो, मौत या जन्म हो, यह सभी प्रारब्ध के वजह से ही आते हैं।

और रामायण में भरत जी का पिता श्री दशरथ जी मरने के बाद, श्री राम जी अरण्य वास में जाने के बाद, और वापस लौटने पर वह बहुत दुखित हुआ था। मुझे यहां नहीं रहते वक्त सब हुआ है। कुलगुरु वशिष्ठजी से मिलकर कहा था कि, मैं सब दुख सहन नहीं पा रहा हूं, यह दुख नहीं मिटेगा क्या? मुझे क्या करना चाहिए? ऐसे पूछने पर वशिष्ठ महर्षी जी ने ऐसा कहा था। बेटा संतोष या दुख, मौत या जन्म, कीर्ती - अपकीर्ति, यह सब प्रारब्ध अनुसार ही आते हैं। इसलिए यह सब प्रारब्ध अनुसार ही आए हैं। आप किसी को बदल नहीं सकते हो। जो होना है वह होता ही रहता है।

इसलिए प्रारब्ध के बारे में वशिष्ठ महर्षि कहते द्वारा विषयों रामायण

में कैसे हुए हैं, अभी देखते हैं।

शबरी माता श्री राम जी को देखना चाहती थी। तब देखी थी या नहीं? अगर शबरी माता परमात्मा को देखना है तो? अपना गुरु ने कहा है कि वह परमात्मा श्री राम के रूप में आएगा । तब श्री राम जी आए थे, शबरी माता अच्छी तरह से देखकर, बहुत संतोष हुई थी। यह संतोष उन्हें प्रारब्ध के वजह से मिला है।

अगर इसी प्रकार कौशल्या माता जब तक बच्चों नहीं थे तब तक दुखित रही थी। लेकिन श्री राम जी का जन्म हुआ है। वह बच्चा सुबह चक्रवर्ती बनने वाला था, लेकिन जंगल में गया था, पति को भी खोई। देखेंगे तो एक तरफ पति को खोना। दूसरी तरफ बच्चा जंगल को चला जाना। अनंत दुख सागर में रही है। यह भी प्रारब्ध ही है।

श्री राम जी जंगलों में जाने का विषय सुनकर ही दशरथ महाराज जी मर गए थे। वह मरना भी प्रारब्ध है ।

और अहलिया जी को श्राप विमोचन हुआ था, दूसरा जन्म मिला, वह भी प्रारब्ध ही है।

और बहुत लोगों ने रामायण युद्ध में श्री राम जी को सहायता किया है। लेकिन पूरी कीर्ती हनुमान जी को ही मिला। वह भी प्रारब्ध है।

और कैकई माता श्री राम जी का बहुत प्यार से पाला था और बड़ा किया था। लेकिन जंगलों में जाने का कारण वही हुई थी, अप कीर्ती मिला। यह भी प्रारब्ध ही है।

ऐसे देखे जाएंगे तो हर एक जीवन में भी होते रहते हैं। रामायण ने सिखाया है कि प्रारब्ध ऐसे होता है। हमारे जीवन में भी प्रारब्ध होती हैं। लेकिन जब साधना हमारे पास है, यह सब मेरी प्रारब्ध के वजह से ही हो रहा है, का समझ रख कर, साधना करते-करते उसको सहनने से उस प्रारब्ध को पार करते हैं।

3. संचित कर्मो :

अगर यह संचित कर्मो नहीं बढ़ाएंगे, तब हमारे जन्मों घटते रहेंगे।

लेकिन सैकड़ो जन्म ले लिए हैं तो वह बहुत इकट्ठे किए हैं । तब इन संचित कर्मों को दग्ध करना है तो ?

भागवत गीता में श्री कृष्ण भगवान ने कहा था कि 'ज्ञानाग्नि दग्ध कर्माणाम'। मतलब ज्ञान बढ़ने से कर्मों को दग्ध होते रहते हैं। लेकिन कौन से ज्ञान हमें पाना है? मतलब स्वरूप ज्ञान है। मतलब अपना स्वरूप को जानना ही है।

आपका स्वरूप मतलब? शरीर है क्या ? मनस है क्या ? बुद्धि है क्या? आत्मा है क्या? लेकिन आप आत्मा है। लेकिन आप अभी तक यह सब जानते बिना जिए हैं। मतलब जब तक ध्यान में नहीं आए हैं हम कौन हैं, हमें मालूम नहीं है। लेकिन यह शरीर, मनस, और बुद्धि, आत्मा के कारण से ही आए हैं। लेकिन दिखने वाला शरीर ही समझकर अज्ञानता में रह चुके हैं। इसके लिए महात्मा लोग छोटी सी उदाहरण देते है।

क्या है कि एक जंगल में एक सिंह ने बच्चा को जन्म देकर मर गई थी। इस सिंह का बच्चा को एक गडरिया ने लेकर पालन करता रहा है। वह गडरिया के बीच में रहकर खुद को भी बकरी समझती थी।

ऐसे जब बकरियों के साथ जब सिंह का बच्चा था, तब एक बार सिंह आया था तब सारे बकरियां भाग गए थे उनके साथ यह सिंह का बच्चा भी बाकी बकरियां के साथ भाग रहा था। तब इस सिंह ने उस सिंह का बच्चा के पास जाकर पूछता है, क्यों तुम भी सिंह है ना? तब क्यों भाग रहे हो? वह मना कर कर कहा है कि वह बकरी है। तब उस बच्चा को एक झील के पास लेकर दिखाता है और कहता है कि हम दोनों एक जैसे हैं ना और दहाड़ता है। उन्हें भी दहाड़ने को कहता है। तब वह बच्चा दहाड़ता है। तब बच्चे को समझ आता है कि खुद भी एक सिंह है, ना की बकरी है। तब सिंह के पीछे जंगल में चला गया है ।

इसी प्रकार मैं जीव हूं का समझकर शरीर को देखते रहते हैं..... जब मानस और बुद्धि के स्थिति में रहते हैं तब अपने आप को शरीर समझते रहते

हैं। लेकिन जब सिंह जैसे सद्गुरु आता है अपने स्वरूप को जानते हैं, मैं आत्मा हूं करके जानते हैं। लेकिन मैं शरीर हूं का स्थिति में रहने से कर्मों दग्ध नहीं होते है।

जब तक मैं शरीर हूं करके अज्ञानता में रहते हैं, तब तक कर्मों को बढ़ाते हैं बंधनों को भी बढ़ाते हैं। फिर से इन बंधनों के लिए कर्मों करते रहते हैं। मगर यह बंधनों को मिटाना कर्मों को रोकना, सब गुरु आने के बाद हमारे स्वरूप को बताने पर ही हो सकता है। और साथ में जो बाकी कर्मों को कैसे दग्ध करना भी जानते हैं।

इसलिए जब तक गुरु ना मिले तब तक साधना और ज्ञान हम नहीं जानते हैं। इस प्रकार अज्ञानता में कर्मों को बढ़ाते हैं। ज्ञान पाने के बाद कर्मों को घटाते रहते हैं। इन कर्मों को दग्ध करने का मार्ग सिर्फ ध्यान साधना में ही है, बल्कि कुछ और करने में बिल्कुल नहीं है।

इसलिए ध्यान साधना को बढ़ाकर, ज्ञान को हर दिन थोड़ा-थोड़ा बढ़ाने पर, संचित कर्मों को भी दग्ध करते हैं। इसी प्रकार हम अपने स्वरूप मतलब आत्मा का दर्शन करने पर, मैं आत्मा ही हूं, शरीर नहीं है का दृढ़ निश्चय विचार आने पर कुछ कर्मों ही नहीं रहता है ।

मगर 'ज्ञानाग्नि दग्ध कर्माणाम' बोलने से नहीं मिटता है, या सुनने से भी नहीं मिटता है।

इतना ही नहीं आत्मा के बारे में जानकारी ही ज्ञान है! देखिए जब आप जागते हो तब अज्ञान का अवस्था कहते हैं, निद्रा में स्वप्नों देखने अवस्था को स्वप्नवस्था कहते हैं, और गहरी नींद में सुशुप्त अवस्था कहते हैं। लेकिन आत्मा को तीनों अवस्थाएं नहीं है। आत्मा कभी नींद नहीं लेती, स्वप्न नहीं देखती या गहरी नींद में नहीं जाती है। आत्मा साक्षी रहती है। आत्मा कर्मों करने का शक्ति देती है। लेकिन खुद कुछ नहीं करती है।

इसलिए आत्मा को कुछ भी कर्म चिपकता नहीं है। लेकिन इस शरीर के साथ किया कर्मों को फिर से शरीर लेकर अनुभव करना पड़ता है। प्रापंचिक

जीवन में अनजाने बहुत गलतियां करते हैं। लेकिन आध्यात्मिक जीवन में आने के बाद, कर्म सिद्धांत को अवगाहन कर कर, हर कर्म को सोच समझकर करते हैं, और कौन से कर्म करना है भी जानते हैं।

इसीलिए मुनि लोग मौन में रहते हैं। करण मौन से शक्ति बचता है, इतना ही नहीं बोलने से भी बहुत कर्मों करने से बच जाते हैं।

देखिए सूखी लकड़ी का ढेर को एक ही माचिस से सारा ढेर को जला देती है। इसी प्रकार सैकड़ो जन्मों में किए कर्मों को ज्ञान का अग्नि में दग्ध हो जाता है। इसलिए दिमाग और बुद्धि को बढ़ाने पर ज्ञान भी बढ़ता है। इसलिए सद्गुरु बुद्धि का विकसित करने को कहते हैं, जब बुद्धि शुद्ध होता है, तब आपका हर कर्म सही करते हो। तब क्या करना - नहीं करना, क्या बात करना - नहीं बात करना, जानेंगे।

इस प्रकार इन तीनों प्रकार की कर्मों को दग्ध कर कर योगी बनना चाहिए। इसीलिए हम सब इतना साधना कर रहे हैं, ज्ञान प्राप्त कर रहे हैं।

अहंकार और ममकार को कैसे दूर करना है?

जीवन में कोई भी अहंकार और ममकार से मुक्त होने का प्रयत्न करना चाहिए। क्योंकि वह मानवों को बहुत कष्ट और नष्ट करते हैं।

मानव को सिर्फ प्रशांत मनस से ही कुछ हासिल कर सकता है, सोच सकता है। लेकिन उस प्रशांतता को क्यों खो रहा है? क्योंकि हर एक चीज पर ममकार रहने पर। सहज बात है कि उन्हें ममकार अपने बच्चों पर, पति या पत्नी पर, या तो पैसों पर होता है।

जब यह ममकार ज्यादा होता है उन्हें खोने का सोच से भय और आंदोलन शुरू होता है। ऐसे आंदोलन में रहने वाले, ध्यान नहीं कर सकते हैं। लेकिन ध्यान जीवन में आने के बाद हर एक विषय जानकर हमें वह सब कम होता है।

हम पहले, गुरु से क्या सीखते हैं कि, 'मैं शरीर नहीं हूं, मैं आत्मा हूं'। जब तक प्रापंचिकता में रहते हैं, मैं शरीर हूं सोचकर ही जीते हैं। और समझते हैं कि यह सारे प्रपंच शाश्वत है। ऐसे सोच कर उन पर ममता बढ़ाकर, जब वह नहीं पाता है, या वह दूर हो जाएंगे करके उनमें आंदोलन शुरू होते हैं और मनस का शांति खोते हैं।

ऐसे मनस को शांति रखने के लिए ही बुद्ध भगवान 'आनापाना सती' ध्यान बोध किया है।

इतना ही नहीं ब्रह्मश्री वशिष्ठ महर्षि योग वशिष्टम में कहते हैं कि मानव को अष्ट मदों होते हैं। इन अष्ट मदों में हर एक को कोई ना कोई होता ही है। मद का मतलब अहंकार, गर्व है ।

उपनिषदों में कहा गया है कि कोई भी मनुष्य को अहंकार नहीं होना चाहिए। कारण यही है कि अहंकार होने पर आत्मज्ञानी नहीं बनेगा।

जो अपने आप को शरीर मानते हैं, उन्हें अहंकार जरूर होता है। जब तक अपने आत्मा को ना जाने तब तक अहंकार रहता ही है।

अष्ट मदों में रहने वालों को अहंकार रहता है। अष्ट मदों मतलब?

1. कुल (जाति) मद, 2. धन मद, 3. विद्या मद , 4. रूप मद, 5. अधिकार मद, 6. संपत्ति मद, 7. ईशाण त्रयम, 8. आश्रित जन पक्षपात।

1. कुल (जाति) मद :- मैं बड़े जाति में पैदा हुआ हूं कर कर अहंकार होना।

2. धन मद :- मैं धनवान, मतलब मैं ज्यादा कमाता हूं का अहंकार होना।

3. विद्या मद:- मतलब मैं ज्यादा पढ़ा हूं का अहंकार होना।

इस प्रपंचिक विद्या में डिग्री को देखकर मैं इतना पढ़ा हूं, मैं वकील हूं, मैं डॉक्टर हूं, मैं इंजीनियर हूं, मैं महान हूं का अहंकार आता है। इसलिए प्रापंचिक विद्या अहंकार बढ़ाता है! लेकिन आध्यात्मिक विद्या मतलब आत्मा विद्या विनम्रता सिखाता है। प्रापंचिक विद्या में मैं पढ़ रहा हूं का सोचता है। लेकिन इस आध्यात्मिक विद्या में सब एक ही है को जानकर विनम्रता आता है। अगर यह नहीं जानेंगे तब अहंकार ही है!

4. रूप मद :- मैं बहुत सुंदर हूं का अहंकार होना।

5.अधिकार मद:- मुझे पद है करके, मैं **C.M.** हूं या, मैं मिनिस्टर हूं का अहंकार होना।

6. संपत्ति मद:- अपने धन और संपत्ति होने पर अहंकार होना।

7. ईशाण त्रयम:- धन पर, पति या पत्नी पर, बच्चों पर ममता होना।

8. आश्रित जन पक्षपात:- मुझे इतना लोग आश्रय कर रहे हैं। मैं इतने लोगों का सेवा कर रहा हूं का अहंकार होना।

इन्हीं को अष्ट मदों कहते हैं।

इनमें सारे नहीं होंगे, तो भी एक तो रहता ही है। अगर इन सबको हटाना है तो, 'श्वास पर ध्यास' ध्यान रखकर, कठोर ध्यान साधना करने पर, धीरे से मनस शून्य हो जाता है। अहंकार का कारण मनस ही है। अगर मनस ही नहीं होता, तब अहंकार कहां से आएगा?

पत्री जी ने क्या कहा हैं ? जिसको हटाना है अगर हटाएंगे, जो प्राप्त करना है वह प्राप्त हो जाता है। मतलब मैं शरीर हूं, मैं मनस हूं, यह प्रपंच

शाश्वत है, अगर इन सोचों को दूर करते हैं, तब सिर्फ आत्मा ही रहता है। अगर आप समझेंगे कि आप वही आत्मा है, तब धीरे-धीरे अहंकार कम होता रहता है।

इतना ही नहीं मुझे एक न एक दिन बुढ़ापा आएगी। उनसे मैं भाग नहीं सकता हूं को जानकर, हर पल याद रखेंगे तब मैं युवक हूं का अहंकार खो जाएंगे।

आज युवक हो सकते हो, लेकिन कुछ दिनों बाद बुढ़ापे में आने के बाद कुछ नहीं कर पा सकते हो। इसीलिए बूढ़े लोगों को देखकर कभी भी छेड़ना नहीं चाहिए। मैं युवक हूं करके अहंकार नहीं होना चाहिए, क्योंकि हर एक व्यक्ति को बचपना, युवा अवस्था कौमार अवस्था और बूढ़ा अवस्था ज़रूर होते हैं। यह जानना चाहिए।

अगर आपको बुढ़ापा सहज ही है लगता है, तब 1.आप अहंकार छोड़ते हो। 2. युवा अवस्था में जो करना है, वह करते हो, मतलब कठोर ध्यान साधना करते हो।

इतना ही नहीं जब युवा अवस्था में है कुछ भी हासिल कर सकता है को जानते हो तब कितना ज्ञान प्राप्त करना है ? कितना साधना करना हैं? कितना ज्ञान प्रचार करना है? सब कुछ करेगा। जिस सत्य को जानना है वह जानेंगे।

इसी प्रकार आरोग्य सही है समझते हो, लेकिन किसी एक दिन बीमार भी पढ़ सकते हो। इसलिए अभी अपने आरोग्य स्थिति से अहंकारी मत होना। अगर अहंकार है तब आप रजोगुण में हैं। जब रजोगुण है तब बहुत सारे पाप कर्मों करते हैं। पापों के वजह से कष्टों मिलते हैं।

सबको जानना है कि 'किसी एक दिन मुझे मृत्यु आएगी', यह ज्ञान रहना चाहिए। ज्ञानी इस सच्चाई को जानता है और समझता है कि, उस मृत्यु मुझ तक पहुंचने से पहले ही मुझे क्या करना चाहिए।

इतना ही नहीं हम इस दुनिया में कुछ ही देर के लिए हैं। लेकिन असली आनंद कब मिलता है? आत्मज्ञान, ब्र्म्ह ज्ञान, प्राप्त कर कर, न केवल इस

लोक में, ऊपर लोकों में भी महानता से जी सकेंगे तब। इसलिए बाद में कभी करूंगा, मतलब मृत्यु इंतजार नहीं करता है। इसलिए मृत्यु आने से पहले ही समय को बर्बाद नहीं कर कर, ज्ञान प्राप्त करना चाहिए।

इसी प्रकार मैं ज्यादा प्रेम करने वाले सब चीज एक न एक दिन छोड़ना ही पड़ेगा, नहीं तो वह भी मुझे छोड़कर चले जाएंगे। यह विषय हर पल याद रखने से, मेरा अपना लोगों पर ममता नहीं बढ़ते रहेंगे। उनके साथ रहेंगे लेकिन अगर उनको कुछ हो जाने पर रोते हुए नहीं बैठेंगे। उनका पति या पत्नी के रूप में जितना कर सकते हैं करते हैं, बच्चों पैदा किए हैं तो जितना करना है करते हैं। लेकिन उन पर ममता नहीं बढ़ाएंगे।

मुझे इतना अच्छा संसार है का अहंकार नहीं रखेंगे। जब आप अहंकार को बाजू में रखते हो, तब साधना की ओर मन जाएगा। लेकिन उन सबको देखकर गर्वित होने से साधना बाजू में जाएगा।

मैं आज कष्ट में हूं, सुख में हूं, जो भी है मेरे अपने किए हुए कर्मो से ही है, मेरा जीवन में इस स्थिति का कारण मैं ही हूं, का सोच खुद रखना है। इसीलिए पत्री जी कहते हैं, 'अपना वास्तव स्थिति का कारण खुद ही है'। वर्तमान में जो भी कष्ट या नष्ट हो, आप खुद का किए हुए कर्मो के वजह से ही है। मतलब खुद ही कारण है।

आज हमें भोगों है, पैसे हैं, वह हमारा प्रताप नहीं है। हमारे पिछले जन्मों का पुण्य कर्मो के वजह से ही हमें भोग मिल रहे हैं। इसी प्रकार कष्टों भी। अगर जितना भी ध्यान करने से आपका कष्टों दूर नहीं होता है? मतलब पिछले जन्मों में कर कर आया हुआ है। अगर उनका हिसाब से साधना करेंगे, तब वह भी चले जाएंगे।

अहंकार की वजह से मैं ही कमा रहा हूं, का सोच रखते हो। मगर आपकी तरह कष्ट करने वालों को उतना है क्या? नहीं है न? तब आप को अहंकार क्यों हो रहा है? अज्ञान से ही है।

इसलिए हर एक विषय में मनस ही कारण है। अहंकार बढ़ाने का भी मनस ही कारण है, अहंकार ना होने का भी मनस ही कारण है।

बुद्ध भगवान ने प्रपंचिक जीवन में संतुष्टि में रहना, और आध्यात्मिक जीवन में असंतुष्टि से रहने को कहा था। तब उन्नति प्राप्त होगा। हमें खाने को कितना चाहिए? पहनने को कितना चाहिए? जो है वह काफी है न?

इसलिए जो है उसी से संतुष्ट होकर जीना चाहिए।

किसी दिन बुढ़ापे में आएंगे, या अनारोग्य आ सकती है, मृत्यु भी एक न एक दिन आएगा, यह जो भी अपना सोचा, मुझे छोड़कर जाना पड़ेगा। मेरे अपने ही कर्मों का फल ही यह जीवन है, हर वक्त यह सोच मन में रखना चाहिए। तब प्रशांति में साधना कर कर अच्छा ब्र्म्ह ज्ञान और आत्म ज्ञान प्राप्त करने का अवसर मिलेगा।

ज्ञानी न केवल इस लोक में, ऊपर लोकों में भी, महान स्थिति में रहेगा। लेकिन अज्ञानी ना इस भूमि पर ना ऊपर लोकों में भी महान नहीं रह सकता है।

इसलिए इस सृष्टि में आत्मज्ञान और ब्र्म्ह ज्ञान से बढ़कर कुछ नहीं है। उससे बढ़कर आनंद का जीवन भी नहीं है। यह जानना चाहिए। यह जानने वाले सत्य को, ज्ञानियों को, और महात्माओं को प्रेम करते हैं।

लेकिन सत्य को अवगाहन करना बहुत कष्ट है। प्रपंच की ओर जाने वाले मनस, सत्य को प्रेम नहीं कर सकता है। दुनिया क्या सोचेंगे कि, मे जीने वाले इन सब को मान्यता नहीं देता है। जो भी दुनिया को परवाह नहीं करता है और सिर्फ भगवान को पसंद हो, तब ऐसे लोग ही सत्य को प्रेम करते हैं, सत्य बताने या बौध करने वाले को, प्रेम करता है, और उनके बातों को निश्चित रूप से पालन करता है। इसी प्रकार हम सब इस सत्य मार्ग में चल रहे हैं।

हमें अहंकार को और ममकार को कम करना चाहिए, साधना पर दृष्टि रखना चाहिए, आत्मज्ञान, ब्र्म्ह ज्ञान बढ़ाने को कृषि करना चाहिए।

ऐसे करने से ही महान जीवन जिएंगे।

साधक का अवलक्षणों ।

बहुत लोग ध्यान साधना कर रहे हैं, और ज्ञान भी सुनते हैं। साधना अपना मनस को शुद्धिकरण के लिए, और ज्ञान अपना स्वस्थिति जानने के लिए उपयोग होता है।

मतलब मैं कौन हूं, मैं कहां से आया हूं, इस भूमि पर क्यों आया हूं? फिर से कहां जाऊंगा? तब उस यात्रा में क्या-क्या अवरोधों होते है? उन्हें कैसे निकालना है? यह सब सिर्फ ज्ञान द्वारा जान सकेंगे। बिना ज्ञान सिर्फ ध्यान साधना करने से उतना जल्दी आगे नहीं बढ़ सकते हैं।

एक पक्षी को उड़ने के लिए दो पंख चाहिए। उसमें कोई एक नहीं रहने पर, उड़ नहीं सकता है। इसी प्रकार भूमि पर आकर, जीवों समझने वालों को देवता बनना है। इसके लिए 'साधना' और 'ज्ञान' दोनों आवश्यक है।

तब उसी के भाग में हम हर दिन 'साधना कर रहे हैं', 'ज्ञान सुन रहे हैं'। ज्ञान कितने दिन सुनेंगे? पूछने वालों को हमें एक ही समाधान देना है, वायु को कब तक लेते रहेंगे जब तक जीवन है। इसी प्रकार ज्ञान जितना दिन सुनना है? मतलब जब तक उसे, परमात्मा का दर्शन ना हो। परमात्मा का दर्शन नहीं हुआ मतलब साधना और ज्ञान काफी नहीं है। यह विषय समझना चाहिए।

मगर इस ज्ञान क्यों नहीं बढ़ रहा है? क्या कारण है ? उन्हें कैसे अवलक्षणों है? थोड़ा जानते हैं। मतलब ज्ञान सुनने से ही 'अज्ञानता' नहीं चली जाती है। लेकिन अज्ञानता जब चला जाता है और ज्ञान प्राप्त होता है तब उनमें 'सर्वात्मा भावना' आता है। 'परमात्मा का दर्शन' होता है। अगर वह नहीं हो रहा है मतलब उनमें अज्ञानता है। मतलब मनस का प्रभाव है।

इसलिए दुनिया की ओर रहने वाला मनस को आत्मा की ओर मोड़ना है। लेकिन मानस पूरी तरह नहीं मोड रहा है मतलब उनमें कुछ अवलक्षणों है। वह क्या-क्या है? उनसे हमें क्या-क्या नष्ट होते हैं? अभी जानते हैं ।

जब अवलक्षण होते हैं जो काम नहीं करना है वही करते हैं। आत्म

ज्ञान नहीं बढ़ता है। इसलिए पहले हम उन अवलक्ष्णों को जानते हैं।

1.असूय । 2.अहंकार । 3.अनुमान।

4. अत्याशा । 5.अज्ञान।

1.असूय :- यह असूय रहने वालों को जलन या ईर्ष्या ज्यादा होता है। यह मनस का अवलक्षण है। आध्यात्मिक जीवन में थोड़ा सा भी आगे बढ़ने पर, प्राप्त हुआ ज्ञान दूसरों को बताने पर अगर कहते हो 'वाह' क्या? अपना थोड़ी है? उन्हें यहां वहां देखकर कह रहा है, यहां वहां देखकर लिख रहा है। अगर ऐसे सोचते हो मतलब उसको असूय है।

जब हम देखेंगे, वेदों से लेकर, द्वापर युग से लेकर बहुत ज्ञान लोक को दिया हुआ है। इस कलयुग में मानव को, ज्ञान पर थोड़ा सा भी आशक्ती होने से कह सकते हैं, वह बहुत ही महान है।

लेकिन अगर पुस्तक रूप में आया है मतलब हमें पढ़ने के लिए ही आया है। जो पढ़ा है उन्हें ग्रहण कर कर आचरण में लाकर दूसरों को बताने के लिए ही है। नहीं तो इस लोक में वेदों का ज्ञान कैसे मालूम होगा? किसी को कब असूय होता है? मतलब जो काम खुद नहीं कर पाते हैं और जो उनका नपसंद का इंसान हीं करता है, तब उन्हें विमर्श करते हैं।

निंदा करते हैं अगर विमर्श या निंदा किया मतलब कहीं न कहीं उनमें असूय है। जरूर ऐसे लोगों को सही नींद नहीं होता है। वह सब को निंदा करते रहते हैं।

पत्री जी क्या कहते हैं, 'नो कमेंट, नो जजमेंट' कहते हैं। क्योंकि ? जब से कमेंट (टिप्पणी) करते हैं, उनमें असूय बढ़ता रहता है। इसलिए बड़ों को कहने वाले विषयों को आचरण में नहीं लाते हैं, तब हमें ही नष्ट होते हैं। आध्यात्मिकता में क्या सही? क्या गलत? कहने वालों सद्गुरु होते हैं।

लेकिन दुर्गुणों को आदत रहने वालों असूय को प्रदर्शन करते हैं। जब वह अपने उन्नति का अवरोध है का अवगाहन नहीं होता है, उस गुण को पालन पोषण कर कर बढ़ाते हैं। एक विषय याद रखना चाहिए। इस सृष्टि में जो कुछ

हो रहा है वह सभी परमात्मा का निर्णय से ही हो रहा है।

इसीलिए मनस का दुर्गुणों को बदलना चाहिए। किसी को देखकर असूय नहीं होना चाहिए। क्योंकि अपने-अपने प्रयत्नों पर ही, उनके टैलेंट रहता है।

लेकिन जब हमें पसंद नहीं है उनमें से बुराई निकालते हैं। वहीं पर हमें असूय आती है। इसे 'असूय' में डूब जाते हैं। ऐसे असूय होने वालों को 'सही नींद' नहीं होता है। मतलब, यह जानना है कि अगर किसी को दुर्गुण है वही नष्ट होता है।

जो कोई ईर्ष्या में, या असूय से भरा है, उनका ही नष्ट होता है। इस गुण के वजह से, आध्यात्मिकता में नहीं बढ़ेंगे। यह विषय ज्ञान पाने पर समझ आता है। इसलिए ध्यान साधना करने वालों को 'असूय' नहीं होना चाहिए। हम सब आध्यात्मिकता में बढ़ना चाहते हैं। इसलिए हमें कौन से गुण से पीछे हो जाते हैं ? उन गुणों को बदलने का प्रयत्न करना चाहिए।

2.अहंकार :- अहंकार का मतलब 'मैं ही' का भाव रहना। सबसे मैं ही महान होना, का गुण है। सबको नीचे दिखाना, मेरे से कोई महान नहीं है का सोच रखना, इन सबको अहंकार कहते हैं।

जब किसी को भी ज्यादा अर्थ बल और अंग बल होता है उसे अहंकार ज्यादा हो जाता है। विद्या में, या धन में, पदों में, मैं ही महान हूं का भाव भी अहंकार को बढ़ाता है।

जब से आप अपने को महान समझते हो, तब इस अहंकार से दूसरों को नीचा दिखाता है। ऐसे लोगों को सही मित्रों नहीं होते हैं। अहंकारी दूसरों को सुनता नहीं है। मुझसे ज्यादा मालूम क्या ! ऐसे कहते हैं। ऐसे लोगों को मनःपूर्वक प्रेम करने वाले व्यक्तियों नहीं होते हैं। इसलिए वह उन्नति प्राप्त नहीं कर पाते हैं। मगर अच्छे मित्रों होने पर अच्छे सलाह मिलेगा।

पत्री जी कहते हैं की सबसे सीखना चाहिए। लेकिन उन्हें मुझे क्या कहना है? मुझे ही सब कुछ जानता हूं । मैं ही सब कुछ कर सकता हूं, का सोच

ही अहंकार है। पत्री जी ने एक और संदर्भ में कहा था कि, 'मुझे मालूम है', लेकिन उन्हें भी जानते होंगे, कुछ भी बता सकता है! क्या पता मुझे उपयोग हो सकता है! करके उनको सुनना चाहिए।

मैं आत्मा हूं, सृष्टि पूरा ही परमात्मामय है, करके गुरु द्वारा सुने हैं, लेकिन उसको जानने के लिए और कुछ अच्छा मार्ग है करके, दूसरों को सुनना, पुस्तकों पढ़ना चाहिए।

वहां पर अहंकार की क्या बात है? अगर और ज्यादा जानने का इच्छा होती मतलब वहां पर अहंकार नहीं है। मुझे ही सब कुछ मालूम है! मुझे कोई बताने के कोई जरूरत नहीं है! मैं सुनूंगा नहीं मतलब वहां पर अहंकार है। इसलिए महात्मा लोग कहते हैं कि 'अहंकार होने वालों को सही मित्रों नहीं होते हैं'।

तब असूय में रहने वालों को, सही नींद नहीं होता है, अहंकार होने वालों को सही मित्र नहीं होता है।

3.अनुमानः- अनुमान में जीने वालों का सही जीवन विधान नहीं होता है। अगर हर एक विषय को अनुमानित करते हैं, आखिर में उन्हें कुछ अच्छी विषय कहते पर भी, अनुमानित करता है।

इस प्रकार कुछ लोग घर वालों को, अपनी पत्नी को, बच्चों को भी, अनुमान से देखते हैं। यह लोग मुझसे इतना प्रेम से रह रहे हैं, उन्हें मुझसे क्या लाभ है? नहीं तो कोई मित्र अच्छा रहने पर, वह मुझसे क्या लाभ चाहता है? क्या वह मुझसे बहुत छिपा कर रह रहा है! उस प्रकार हर एक विषय को अनुमान करते हैं, आपके जीवन में आनंद ही नहीं रहता है। वह सही जीवन विधान नहीं है।

पत्री जी का बोध, बिना अनुमान सुने हैं, इसीलिए यहां तक पहुंच पाए हैं। आप आत्मा है करके किसको मालूम है? आप दिखने वाला शरीर नहीं है, नहीं दिखने वाला आत्मा कह रहे हैं! यह कोई संदेहात्मक है। अगर ऐसे दृष्टि से देखते हो तो हम यहां तक नहीं पहुंचते हैं। हम लोग सद्गुरु पर यकीन किये

है। वह सत्य कह रहा है का मानना ही, हमें इतना दूर तक लेकर आया है।

इसलिए अनुमान मनुष्य में नहीं होना चाहिए वाला एक लक्षण है।

4.अत्याशाः- आशा अलग है अत्याशा अलग है। 'अत्याशा वाला को कभी शांति नहीं होती है।

इस साल व्यापार में कुछ लाभ मिला है। अगला साल इससे ज्यादा आना और आगे साल में इससे भी ज्यादा चाहना अत्याशा कहते हैं। लाभ मिलने का सोचना सही है, अगर वहां तक संतुष्टि रहता है, उस साल पूरा आनंद से रहता है। अगर अत्यशा से, जो चाहा वह नहीं मिला तब वह बहुत अशांति हो जाता है, और दुख में रह जाता है।

इसीलिए कहते हैं कि 'अत्याशा वाला को कभी संतुष्ट नहीं होता है'।

क्योंकि जानना चाहिए कि अपनी-अपनी अर्हत के हिसाब से जितना मिलना है, उतना ही मिलता है। इसीलिए बड़ों का कहना है कि आशा ही नहीं होना चाहिए।

'अत्याशा' मतलब और ज्यादा चाहिए का सोच रखना है। मतलब जितना भी है और ज्यादा चाहना। जितना भी पैसे हैं और चाहना अत्याशा होता है। और जितना भी धन संपत्ति है उससे संतुष्ट होकर और चाहना अत्याशा कहते हैं। इस अत्यशा के वजह से शांति नहीं होगा।

5.अज्ञानः- अज्ञान में रहने वाले को आनंद नहीं होता है। कारण आनंद आत्मा मतलब भगवान का लक्षण है, और वह सिर्फ उस आत्मा की स्थिति, ज्ञानी को ही होता है। इसीलिए बड़ों कहते हैं की अज्ञानता को दूर कर कर, ज्ञान प्राप्त करना चाहिए।

इसलिए पहले अज्ञानता क्या है को जानना है। जब कि मैं आत्मा हूं, फिर भी 'मैं शरीर हूं समझना', 'आत्मा ही भगवान है, फिर भी विग्रह को भगवान समझना', 'अशाश्वत रहने वाले, हमें दिखने वाला प्रपंच को शाश्वत समझना ही' अज्ञान है।

इसलिए पत्री जी हमें ज्ञानी बनने के लिए ही 'आप शरीर नहीं है,

आत्मा है' कहते हैं। इतना ही नहीं, और कहा है कि विग्रह भगवान नहीं है, आत्मा ही भगवान है ।

और उनके अपने 18 आदर्श सूत्रों में! 'विग्रह आराधना नहीं, सत्य का आराधना मतलब आत्मा का आराधना करना चाहिए' कहा है। करण आत्मा ही भगवान है इसीलिए।

इतना ही नहीं, उसने और कहा है कि, हमें दिखने वाले प्रपंच शाश्वत नहीं है, यह सब नाश होने वाले हैं। ऐसे सत्य को बताकर हमें ज्ञानी बनने के लिए ही उनका पूरा प्रयत्न था! कारण ज्ञानी को दुख नहीं होता है, हर समय आनंद में जीवन बिता सकता है।

पत्री जी ने विग्रह आराधना क्यों मना करते हैं? कारण विग्रहों देवताओं के प्रतिमाएं हैं। लेकिन असली सत्य स्वरूप आपके अंदर ही है। आत्मा के रूप में। इसीलिए यह जानना है कि आत्मा आराधना ही सही देव आराधना है।

किसी से भी पूछने से कहते हैं कि भगवान का कोई रूप नहीं है, नाम नहीं है, सर्वव्यापित है, सर्वांतर्यामी है, लेकिन विग्रह को आराधना करते रहते हैं? क्यों कि यही अज्ञानता है। ऐसे लोगों को आनंद कहां से मिलेगा?

आगर 'आनंद स्वरूप', आपके शरीर में ही है? आपका शरीर में जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त बाहर मिलने वाला अल्प आनंद के लिए प्रयत्न करने से आनंद कहां से मिलेगा?

ध्यान में आने से पहले, हम इस प्रपंच को शाश्वत मानते हैं, पत्री जी का परिचय के बाद, इस दिखने वाला प्रपंच में कुछ भी शाश्वत नहीं है को जाने हैं, सब मिथक है जान लिए हैं। लेकिन सब कुछ शाश्वत है करके जीना अज्ञानता है। अज्ञानता में रहने वालों को आनंद नहीं होता है।

इसलिए अगर अज्ञानता तो को दूर करना है तो, सुबह ज़ूम क्लास में आना है, भीमावरम क्लास में आना है। मगर इस ज़ूम क्लास में और भीमावरम क्लास में भी नहीं आएंगे तो कैसे अज्ञानता दूर होगा? ज्ञान कैसे मिलेगा ? सोचिए।

इसलिए सबी को सीखने को, करने को, अवगाहन करने को, आचरण में लाने को, बहुत कुछ है। इसलिए गुरु का बोधन को आचरण करते हुए, दुर्गुणों को मतलब 'असूय, अहंकार, आत्याशा, अनुमान, अज्ञानता' को दूर करना चाहिए।

अगर इन गुणों को दूर नहीं करते हैं, असूय वालों को नींद नहीं होता है, अहंकार वालों को मित्रों नहीं होते है, अनुमान वालों को सही जीवन विधान नहीं होंगे, मतलब शांति नहीं होती है, अज्ञानता में रहने वालों को आनंद नहीं होता है। यह जानना चाहिए।

अगर ज्ञान प्राप्त करना है तो? श्रद्धा रहना चाहिए, श्री कृष्ण जी ने कहा है न?

इसीलिए श्रद्धापूर्वक सुनना चाहिए, और आचरण करना चाहिए।

इसलिए पूर्व कल में, बड़ों कहते हैं कि श्रद्धा से सुनो, पूरा शरीर कानों बनाकर सुनना चाहिए। उतना एकाग्रता से सुनने से तब इस आत्मा विद्या अंतरांतरों में पहुंच जाता है। उसे कभी भूल नहीं पाएंगे। जो भी नहीं भूलते हो उनका आचरण में रखेंगे। और ज्ञान प्राप्त करेंगे।

ऐसे हमारे कमियों को ठीक कर कर, आगे बढ़ाने को जो जरूरी है उसे जानकर, साधना करते हुए, आगे बढ़ते बढ़ते, ज्ञान प्राप्त कर कर, दस दूसरे लोगों का ज्ञान मार्ग में लेकर जाना ही हमारा काम है।

अगर त्रिकरण शुद्धि होना है तो ?

यह सहज बात है कि मानव अपने लिए कष्ट करता है। लेकिन अपने लिए कष्ट करना कुछ महान बात नहीं है। भगवान के दृष्टि में दूसरों को सेवा करना ही महान विषय है। ऐसे करना है तो अपने बातों, कर्मों, सोचो, को एकीकृत होना चाहिए। उसी को त्रिकरण शुद्धि कहते हैं।

मतलब जो सोचते हो! वही बात करना है। वैसे ही जो बात करते हो! उसी को करना चाहिए। इसी को त्रिकरण शुद्धि कहते हैं।

त्रिकरण शुद्धि का मतलब ही सत्य में जीना है। मतलब अच्छे बातें, अच्छा आलोचना और अच्छा काम। यह तीनों आचरण करना सबके बस में नहीं है। अगर ऐसा होता तब पूरी दुनिया में सब लोग न केवल सत्य में ही जीते हैं, जीवन का परमात्मा को जान चुके होंगे।

क्योंकि ? सब लोग भोगने के लिए ही प्राथमिकता देते हैं। बहुत ही कम लोग ही परमात्मा को पहुंचने का प्रयत्न करते हैं।

सहज बात है की सोच एक होता है, बातों और कर्म अलग होते हैं। वह त्रिकरण शुद्धि नहीं होता है। अगर त्रिकरण शुद्धि नहीं होता है, कोई भी काम सफल नहीं होता है।

उदाहरण के लिए परशुराम के माता, रेणुका हर दिन तालाब जाकर अपनी तपोशक्ति से रेत का बर्तन बनाकर पानी लेकर जाती थी। उसने एक दिन आकाश मार्ग में एक गंधर्व जाते वक्त, उसे देखकर कितना सुंदर है का सोच करी थी। ऐसे सोचते हुए रेत से बर्तन बना नहीं पा रही थी। बहुत बार कोशिश की थी। देखिए यहां पर अपनी सोच में दोष होने पर, तपोशक्ति खोकर अपनी काम को सही नहीं कर पाई।

मानव मतलब आलोचना का प्रभाव में जीने वाला है। इसलिए आलोचना भी शुद्ध होना चाहिए। अगर आलोचना में दुष्ट संकल्प, या दुष्ट आलोचना से रहने वालों बाहर के लोगों से कितना भी मीठी बातों कर लें, कैसे भी काम

सफल नहीं होता है। इसलिए आलोचना, बातें, कर्मों अच्छे होना चाहिए। ऐसे कहते हैं बड़े लोग।

इतना ही नहीं बुद्धि सही होने पर ही सही निर्णय लेते हैं। सही काम करते हैं। ऐसा त्रिकरण शुद्धि रहना है तो? 'श्वास पर ध्यास' ध्यान रखकर कठोर ध्यान साधना करना चाहिए। साथ में सात्विक शाकाहार खाना चाहिए। मतलब विश्व शक्ति से बना हुआ फलाहार और शाकाहार लेना चाहिए। शाकाहार शरीर को शक्ति देती है।

मांसाहार खाना मतलब शवाहार खाना ही समान है। उस जीव को मारकर खाने से शक्ति कम होती है। देखिए अगर मनुष्य मरता है उसे शव कहते हैं ...ऐसे ही कोई भी जीव मरने से, या प्राणी मरने से शव ही कहते हैं। शव खराब होता है। उसमें जीव कणों नाश होने पर प्राण शक्ति नहीं होता है। इसलिए खराब होता है। लेकिन सब्जियों में प्राण शक्ति बहुत दिनों तक रहता है। इसलिए प्राण शक्ति अधिक रहने वाले सब्जियों को खाना को कहते हैं।

भगवान की दृष्टि में अच्छा आलोचना मतलब अपने लिए आलोचना करना नहीं, दूसरों के लिए अच्छा सोचना ही सही आलोचना है।

पुट्टपर्थी में साइ बाबा कहते थे, 'दूसरों का सेवा ही परमात्मा सेवा - जीव का सेवा ही जिवेशवर का सेवा है' ।

विवेकानंद जी ने भी कहा है कि 'अगर विश्व के लिए आप कष्ट करेंगे तब विश्वेश्वर भी आपका ख्याल रखते है'। इस दुनिया में अगर महान पुण्य कर्म कोई है, वह है सबको ध्यान और ज्ञान सिखाना है। प्रपंच की ओर रहने वाला मनुष्य को भगवान के तरह मोड़ना ही ध्यान है। इसलिए कहते हैं कि ध्यान सिखाने से महान पुण्य और कुछ नहीं है।

अगर मैं अपनी पूरी शक्ति परिवार के लिए उपयोग करता हूं, तो मैं इतना ज्ञानी नहीं होती। मेरा बेटा कहता है कि आप दोनों बहुत पुण्य आत्माएं हैं, भगवान आपका शक्ति दे रहे हैं तभी आप घूम सकते हो। अगर मैं एक दिन भी कहीं घूमता हूं इतना थक जाता हूं, पता नहीं आप दोनों कैसे घूमते रहते हैं।

जब दूसरों के लिए इस जीवन को खर्च करने का सोच आता है, तब

करवाने की शक्ति भगवान से ही मिलती है। इसीलिए महात्मा लोग कहते हैं अच्छा आलोचना मनस को शक्ति देती है। मैं, और मेरे बच्चों, मेरा घर, मेरा परिवार, ऐसे सोचेंगे तब वह स्वार्थ होता है। उनके साथ-साथ अगर दूसरों का भी सेवा करते हैं वह निस्वार्थ होता है।

इसलिए इस ज्ञान को सीखते हुए, सत्य की समझ आने पर, धर्म को जानकर.... अज्ञानता में अधर्म मार्ग में चलने वालों को सत्य मार्ग में लाना ही, हर एक मानव का कर्तव्य है। भूमि पर पैदा होने वाला हर एक मानव का एक धर्म है। क्या है वह धर्म ? सत्य को अन्वेषण करना, सत्य को जानना चाहिए, उस सत्य को पहुंचने का प्रयत्न करना चाहिए।

पत्री जी ने साधना के साथ-साथ स्वाध्याय भी करने को कहते हैं। वह कहते हैं कि, एक किताब, हमारे जीवन को बदलने का इतना शक्ति देती है। 'श्वास पर ध्यास' ध्यान करने पर आपका आत्मा शक्ति बढ़ती है। जब आत्म शक्ति बढ़ती है, बुद्धि भी बढ़ती है और आपके बातों पर जागरूकता, मनस पर जागरूकता होता है। कौन सा काम करना है, क्या खाना खाना है, वही खायेंगे और सही आलोचना करेंगे। जिसको ही सत्य मानते हो उसी का ज्ञान लेते हो।

इसीलिए महात्मा लोग एक बात कहते हैं, अगर परमात्मा कृपा, और गुरु कृपा आप पर है तब ? आप योगी बन सकते हो। परमात्मा के कृपा से गुरु मिलता है। गुरु कृपा से साधना और ज्ञान बढ़ाते हैं।

उनके वजह से अच्छे सोचों, बातें, कर्मों, हमारे जीवन में आते हैं। ऐसे लोग त्रिकरण शुद्धि से जी सकते हैं।

इसीलिए अन्नमाचार्य जी कहते हैं कि, 'त्रिकरण शुद्धि से करने वाले कर्मों को देवता प्रसन्न होते हैं, लोग भी प्रसन्न होते हैं'।

बात कैसे होना चाहिए ?

जितना भी साधना करते हैं कभी-कभी अनजाने में ही बातें करते रहते हैं। ऐसी बातों से भी कई कर्मों इकट्ठे करते हैं। इसीलिए श्री कृष्ण जी ने भगवत गीता में अध्याय 17 और श्लोक 15 में हमारे बात किस तरह करना है, हमें विवरण देते हैं।

श्लोकः अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत ।

स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते ।।(भ.गी.7-15)

तात्पर्यः- दूसरों के मन को बाधा नहीं पहुंचाना, सत्यमय होना, प्रियम होना, अच्छा करने वाला होना का वाक्य वेदों आदि को अध्ययन अभ्यास करना ही है वाचक तपस्या कहते हैं।

इसीलिए हमारे बातें कैसे रहना है,

1. अनुद्वेग करण होना चाहिए।
2. सत्य ही होना चाहिए।
3. प्रियं होना चाहिए।
4. हित ही होना चाहिए।
5. कम मतलब मित भाषा रहना चाहिए।

हम जब बात करते हैं इनका ध्यान में रखना है।

1. 'अनुद्वेग करण बातें करना चाहिए' :- मतलब आवेश पूर्ण नहीं होकर बात करना । हर एक बात पर आवेशपूर्ण नहीं होना चाहिए। इसी प्रकार दूसरों को आवेश होने वाले बातें नहीं करना चाहिए।

मतलब प्रापंचिक जीवन में गलतियां अहंकार से करते है। लेकिन आध्यात्मिक जीवन में अहंकार कम हुआ लगता है, लेकिन किसी भी कारण से वह हर क्षण बाहर आता है।

कभी-कभी हमारे आवेश पूर्वक बातें दूसरों को चोट पहुंच सकता है।

इसलिए हमें अनुद्वेग पूर्ण का बातें करना चाहिए। मतलब अगर आपकी बातों से सामने वाला टेंशन में आते हैं तब उस कर्म आपको ही मिलेगा। इसलिए हर क्षण जागरूकता में बात करना चाहिए। उदाहरण के लिए हमें नौकरानी आनी है, नहीं आयी है। अगर आप सोचेंगे कि वह समय पर आएगी तब वह पॉजिटिव सोच है। लेकिन वह अभी आई नहीं यह काम कैसे होगी ? मगर हम ऐसे टेंशन में न रहकर और दूसरों को भी टेंशन नहीं देना है। इसलिए हमारे बातें अनुद्वेग पूर्वक होना चाहिए।

2.सत्यम बात करना चाहिएः-

हर समय सत्य को ही बात करने को प्रयत्न करना चाहिए। हर कोई हमें अनेक विषयों बताते हैं। वह सत्य है या असत्य है का विचारण नहीं कर कर, जो भी सुना सत्य मान कर सबको बताते हैं तो ? क्या वह असत्य हो तो! हम असत्य को प्रचार करने वाले होंगे।

इसलिए वह कितना सच है? यह सोचना है। आपको मालूम हुआ सत्य को दूसरों को बताओ। तभी पत्री जी कहते हैं, आप कितने सत्य में जीते हो, विचारण करो! असत्य को कभी प्रचार नहीं करना है।

लेकिन विचारण कर कर ध्यान ही महान है, ज्ञान मार्ग ही महान है, का सत्य को सबको बोध करो। आत्मा ही भगवान है का महान सत्य को जब जाना है तब आत्मा को पहुंचने का सत्य मार्ग उन्हें बताना चाहिए ।

3. प्रियं बात करना चाहिए :- हमें कभी भी प्रिय बातें ही करना चाहिए।

उदाहरणः- जो रोग हो से बाधित है, उन्हें नहीं कहना है कि आपने बहुत पाप किए हैं। क्योंकि वैसे ही कष्ट में है, उन्हें और दुखित करना ठीक नहीं है।

सामने वाले को कष्ट नहीं कर कर, विमर्श नहीं कर कर, गलतियों को बार-बार नहीं दिखाकर, प्रिय बातें करना चाहिए। प्रेम पूर्वक और प्यार से बात करना चाहिए।

4.बातें हित ही होना चाहिएः- जो भी हम बात करते हैं सामने वालों के हित

में ही बात करना चाहिए। उनको अच्छा ही होना चाहिए। यह पहले हमें सीखना चाहिए।

ध्यान साधना दूसरों को बताना चाहिए, ज्ञान को बांटना है । ऐसे करने से उनके हित चाहने वाले होंगे।

तटवर्ती सर कई सारे जगह में क्लास निर्वहन कर रहे हैं। बहुत लोगों को ज्ञान बोध करते हैं । यह सब के हित में कर रहे हैं । वह हमें उपयोग करना चाहिए। जीवों को मारना महा पाप है कहकर, उनसे बंद कर सकेंगे तब उनके हित चाहने वाले होंगे।

और कोई रोग से बाधित है तो उन्हें 'श्वास पर ध्यास' ध्यान करने को कहना उनके हित होता है। इसलिए वह ध्यान साधना कर कर स्वस्थिति प्राप्त करेंगे।

5. मित भाषण करना :- जितना हो सकता है कम बातें करना, फालतू में बकबक बंद करना चाहिए। जब आवश्यक है तभी बात करना चाहिए। नहीं तो जुबान से एक शब्द नहीं निकलना चाहिए।

मुनी लोग हर समय मौन में रहते हैं। इसीलिए उनके पास शक्ति बढ़ती है। इसलिए उनका हर एक बात सफल होता है। इसलिए मुनि लोग मौन में रहकर अंतर शक्ति बढ़ाकर उस शक्ति को अपने शिष्यों के लिए, या लोक कल्याण कर्मों के लिए उपयोग करते हैं।

हम लोग हर वक्त बात करने से शक्ति नष्ट करते हैं। इसलिए पत्री जी कहते हैं, कि हमारा बात चाहे आपको उपयोगी होना या सामने वालों को उपयोग होना है। निस्प्रयोगी बातें जुबान से नहीं निकलना चाहिए। बहुत लोग बेकार की बातें करते रहते हैं। ऐसे करने पर अपनी शक्ति नष्ट करते हैं।

इसीलिए हमारे बातें काम होना चाहिए। ध्यान करने से ज्यादा मौन में रहेंगे। और उतना ही शक्ति बढ़ेगा ।

कम बातें क्यों करना है? क्योंकि वह भी कर्म ही है। और इसी कर्मों के वजह जन्मों भी बढ़ते हैं। यह सभी को याद रखना चाहिए। इसीलिए बातों करते समय हर एक को बहुत ध्यान रखना है।

आशा।

हर एक मानव को आशा होती है। सबसे अच्छा रहने का, एक आशा होती है। एक ही नहीं बहुत विषयों पर आशा रखते हैं।

श्री रमन भगवान कहते हैं की अगर आपको कोई एक भी छोटी सी आशा रखते हो, या छोटी सी इच्छा है, मतलब आप माया के वश में है। तब इस माया को कैसे दूर करेंगे? मतलब यह माया है का सतर्क होकर, सजग होकर, यह माया मुझे वश कर लिया है, और खुद अपने आप को जानने से, तब कुछ दिनों बाद उनसे बाहर आ सकते हैं।

जब जानेंगे कि यह प्रपंच अशाश्वत है, तब क्यों नहीं समझते हो कि आप जो चाहते हैं, वह भी अशास्वत है। कारण यही है कि आप माया में है। इस प्रकार आशा में, या इच्छाओं में फस जा रहे हैं।

यह आशाओं, और इच्छाएं, आपके नहीं है। पड़ोसी को देखकर तुम्हें भी इच्छा हुआ है। मतलब? जब पड़ोसी को नहीं है आपको इच्छा नहीं हुआ। और जब पड़ोसी के पास है तब आपको इच्छा हुई, आशा हुआ है। अगर नहीं पाया तो निराश रहते हो। यह सभी क्यों आए हैं, क्योंकि ध्यान साधना नहीं होने पर ही।

श्री आदि शंकराचार्य जी कहते हैं अगर साधना चतुष्टय को ठीक से आचरण नहीं करेंगे, तब साधना में प्रगति नहीं होगा। ध्यान साधना में आकर भी मेरा आरोग्य ठीक होना है, मुझे यह चाहिए, वह चाहिए कर कर आशा हो रहा है। इसका कारण यही है कि गुरु का बोधों को सही समझ नहीं पाया और आचरण नहीं करते हो।

हर साधक को श्रवण, मतलब सुनने, से बहुत बदलाव आता है। स्वाध्याय द्वारा और बदलाव आता है। पत्री जी, या वशिष्ठ महर्षि जी जैसे लोग,कहते हैं कि स्वाध्याय करना जरूरी है। इन दिनों में स्वाध्याय नहीं होने पर बहुत लोग पूछते हैं धर्म क्या है? सत्य क्या है? ज्ञान का मतलब क्या

है? यह सब जानने के लिए आध्यात्मिक पुस्तकों पढ़ना चाहिए।

आशा होने पर ही प्रयत्न होता है। आशा कब छोड़ सकते हो? जब यह समझ आता है कि मैं आत्मा हूं, मैं अपना जीवन को चुनकर इस भूमि पर आया हूं, प्रकृति के अनुसार जीने पर, तब आशा को छोड़ सकते हो । ऐसे लोगों से बड़ा करोड़पति इस भूमि पर कोई नहीं होता है। ऐसे लोगों छोटे-मोटे इच्छाओं के लिए दुखित नहीं है।

उपनिषदों में कहते हैं कि जो कोई आत्मज्ञान, ब्र्स्म ज्ञान के लिए प्रबल इच्छा रखता है, वही परमात्मा को इष्ट है। ध्यान साधना मतलब तपस्या, दोनों राक्षसों और देवताओं ने किए हैं। राक्षसाओ शारीरिक और मानसिक इच्छाओं के लिए किए हैं। लेकिन देवताओं ने आत्म शक्ति बढ़ाने को किए हैं। देवताओं जैसे हमारा भी दृष्टि हमेशा आत्मज्ञान और ब्र्स्म ज्ञान पर रहना चाहिए।

लेकिन वह भूलकर पड़ोसी को, सामने वाले को, आजू-बाजू वालों को, बंधुओं को देखकर उन जैसे होने का इच्छा रखते हैं। और हर एक चीज पर आशा रखते हैं। आशा मनुष्य को नीचा करती है। आशा हो सकता है ....लेकिन जहां तक होना वही तक कि रहना है। इच्छाओं को पा सकते हैं लेकिन अपनी सीमाओं तक ही। लेकिन दूसरों को देखकर नहीं।

जब आंखें खोलते हैं, दिखने वाला दुनिया, आंखें बंद करने से गायब होता है। यही माया है। एक विषय ध्यान दीजिए। जब हम गहरी नींद में जाते हैं बहुत ही सुख में रहते है। वहां पर ना कोई आशा ना इच्छा , कुछ भी नहीं है। इसलिए सुखमय नींद में गए हो। जब उठते हो, दुनिया को देखकर ही चाहतें शुरू होते हैं। चाहत बढ़ती है जब आपका जो है उससे संतुष्ट नहीं है। इसलिए महात्माओं का कहना है कि जितना है उसी में संतुष्टि से जीना है।

जब आशा, इच्छाओं को छोड़ते हो, तभी आप दुख रहित स्थिति में होते हैं। आशा, इच्छा में बदलता है। जब इच्छा नहीं पाते हो तब दुख आता है। मतलब आपका दुख का कारण आपके अंदर का आशा है। देखिए जानवरों को कुछ भी आशा नहीं है, तभी खुशी से जीते हैं। इसी प्रकार छोटे बच्चों भी हमेशा

हंसते रहते हैं, प्रशात्ता से नींद में चले जाते हैं क्योंकि उन्हें कुछ आशा नहीं है।

जब हम गहरी नींद में आराम है आशा नहीं है। बिना आशा के स्थिति में आराम है। इसलिए जो है उससे संतुष्ट रहकर, आशा को छोड़कर आध्यात्मिकता में उन्नति प्राप्त करने का इच्छा रखने पर साधना बहुत ही इष्टा पूर्वक से करते हैं। आशा मनस संबंधित है। उस मनस को बदलने का शक्ति सिर्फ और सिर्फ ध्यान साधना करने से ही होगा।

इसलिए ध्यान साधना कठोरता से करने पर मनस का प्रामुखता कम होकर, मनस शुद्ध होकर, आशा दूर हो जाता है, तब संतुष्टि से जी सकेंगे।

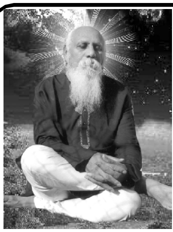

ध्यान की विधि सांस पर ध्यान

जिस किसी को जो कोई आरामदायक आसान हो उसमें आराम से बैठकर... दोनों हाथों को जोड़कर... दोनों आंखों को बंद करके... प्राकृतिक रूप से होने वाला सांस लेना और छोड़ने की प्रक्रिया का अवलोकन करना चाहिए!

बीच-बीच में अनेकानेक सोच मन में आते हैं उन्हें वहीं के वहीं कटौती करके... फिर से बार-बार सांस पर ही ध्यान ले जाते रहना चाहिए... धीरे-धीरे निर्विचार की स्थिति मिलती है.... चित्त वृत्तों का निरोध होगा... मन निर्विषय, शून्य हो जाएगा। मन को शांति मिलेगा। यही ध्यान की अवस्था है।

इस निर्विचार अवस्था में होने वाले अनेकानेक शारीरिक, नाड़ी मंडल, आत्मा अनुभवों का अवलोकन करना चाहिए। इस स्थिति में ब्र्मांडीय प्राण शक्ति अत्यधिक मात्रा से शरीर में प्रवेश करके नाड़ी मंडल को शुद्ध करता है। उस ऊर्जा के कारण बीमारियां कम हो जाते हैं। नाड़ी मंडल शुद्ध होने के कारण कर्मों का नाश होते हैं।

हर दिन अपने उम्र के हिसाब से... जितना उम्र हो कम से कम उतने मिनट... जरूर... दिन में दो बार... ध्यान करना चाहिए।

आलसी तत्व ।

आलसी तत्व मतलब जो काम करने को सोचते हो, उन्हें टालते हो, वह काम नहीं करते हो।

मानव जन्मों में जो काम करना है उसे नहीं करने का कारण क्या है? कुछ लोग न जानकर करते नहीं, कुछ लोग जानकर भी नहीं कर पाते हैं।

वशिष्ठ महर्षि कहते हैं कि उसका कारण आलसी तत्व ही है। यह प्रपंचिक जीवन में, या आध्यात्मिक जीवन में भी आलसी तत्व ही है जो उन्नति प्राप्त करने पर रुकावट करती है।

अपरा विद्या, मतलब प्रापंचिक विद्या, परा विद्या मतलब आध्यात्मिक विद्या, दो प्रकार के विद्या हैं। कोई भी अपरा विद्या पहले सीखना चाहिए। कारण यही है कि उस विद्या बिना परा विद्या में नहीं जा सकते हैं।

हर मानव में एक ही आत्म शक्ति है। लेकिन कुछ लोग उत्साह में काम करते हैं, कुछ लोग नहीं करते हैं। कारण उस व्यक्ति में आलसी तत्व ही है। सभी अनर्थों का मूल कारण अलसी तत्व ही है। इसके कारण कोई भी पुरुष प्रयत्न नहीं करते हैं।

इस आलसी तत्व होने वालों को, श्री वशिष्ठ महर्षि उन्हें गधा सामान कहते हैं। देखिए एक धोबी गधा को पीट कर, उससे बहारों को से उठाते हैं। नहीं तो वह नहीं उठाता है।

मगर यह आलसी तत्व लोगों भी ऐसे ही हैं ! लेकिन इस आध्यात्मिक जीवन में वही, साधक को बहुत रूकावटी है। क्योंकि? मानव जन्म लेने वाले हर कोई ज्ञान में बढ़ना है। लेकिन इसके लिए योगाभ्यास करने को आलसी तत्व ही अवरोध है।

एक साधक को आध्यात्मिक मार्ग में जो साधनाएं करना है, वह सुबह उठकर करना चाहिए। नहीं उठने का कारण आलसी तत्व ही है।

वशिष्ठ महर्षि कहते है कि उस आलसी तत्व का गुण छूटने से ही

साधक उच्चतम स्थिति पहुंच सकता है। गुरुवों कहते हैं की आलसी तत्व को छूटने के लिए सही आहार, सही व्यवहार, सही नींद होना चाहिए।

सही आहार मतलब मिताहार, अधिक नहीं खाना है, कम नहीं खाना है। नींद भी कम या ज्यादा नहीं होना है।

इस आलसी तत्व का कारण, शक्ति रहने पर भी हासिल नहीं कर पा रहे हैं। ध्यान बहुत महान है, को कहने पर भी, वह नहीं कर पा रहे हैं। कारण आलसी तत्व ही है।

कोई भी कष्ट कर कर ध्यान साधना करने से, बुद्धि को विकास कर कर, कर्मों को दग्ध कर कर, ज्ञान प्राप्त करना, आलसी तत्व रहने पर बहुत कष्ट मानते हैं। बहुत लोग सब कुछ जानते हुए भी नहीं कर पाने का कारण आलसी तत्व ही है। जिनको आलसी तत्व नहीं होता वह आध्यात्मिकता में जल्दी बढ़ेगा। जिसका आलसी तत्व है वही का वही, एक झांझा की तरह, रह जाता है।

इसलिए जो पीछे रह जाता है अगर पूछेगा हैं की क्यों मैं पीछे रह जा रहा हूं ? क्यों मैं दूसरों की तरह नहीं कर पा रहा हूं? जब सोचते हो तब समझेंगे कि खुद का आलसी तत्व ही कारण है।

कोई भी प्रयत्न करने पर, कुछ भी हासिल कर सकते हैं। हम सबको मानव जन्म मिला, सद्गुरु मिला, करने का समर्थ है। लेकिन यह तीनों रहने पर भी दृड निश्चय से साधना नहीं कर पा रहे हैं, कारण आलसी तत्व ही है।

सबको जानना है कि मैंने जो सीख वह एक सरसों का बीज जितना है, और जानने को मेरु पर्वत समान है। इसी जन्म में सीखना खत्म करना चाहिए। अगर ऐसे सोचेंगे तब नींद में भी उठकर उस काम को करने का मन करता है। जैसे भी हो, पहले हम अपने आप पर दया नहीं करेंगे तो आलसी तत्व पास में भी नहीं आएगा।

याद रखिए अगर गुरु, शिष्य को कुछ काम करवाने को कहते हैं, मतलब शिष्य को तेज बनाने के लिए ही तपन है। गुरु का प्रयत्न यही है कि

हम में वह आलसी तत्व का प्रवेश नहीं करने का है। गुरु हमें उत्साह भरना हमारा मनस को प्रापंच की ओर नहीं, आत्मा के तरफ मोड़ने को, इस ज्ञान प्राप्त करने को बहुत प्रयत्न करता है।

वशिष्ठ महर्षि से लेकर पत्री जी तक यही विषय कहते हैं कि साधना, स्वाध्याय, सज्जन संगत्य.... जो भी आलसी तत्व को छोड़कर, इन तीनों में भाग लेने से, उत्तम स्थिति पाने को अवसर मिलता है।

गुरुजी को देखकर हमें सबसे पहले सीखना है कि इसी आलसी तत्व को छोड़ना।

गुरु एक क्षण भी विश्राम नहीं लेते हैं। हमें तेज करते हैं। करते ही हैं कभी भी एक क्षण भी विश्राम नहीं लेते हैं। शरीर को कष्ट करते ही रहते हैं। उनका हर एक शब्द और काम उपयोगी है। और पत्री जी ने उतना अद्भुत तरह जिया, साधक को जीवन विधान ऐसे रहना है करके दिखाया है।

आलसी लोग सूक्ष्म को ग्रहण नहीं कर सकता है, मतलब हमारा शरीर में सूक्ष्म रूप का आत्मा को नहीं जान पाएंगे। मतलब आलसी तत्व छोड़कर साधना, सज्जन संगत्य, स्वाध्याय करने पर ही उसे सूक्ष्म आत्म तत्व को जान सकते हैं। लेकिन आलसी तत्व रहने वाला कुछ भी हासिल नहीं कर सकता है। यह हमें समझना है।

हर दिन जूम क्लास में भाग नहीं लेना कारण आलसी तत्व ही है। मैं यकीनन कह सकता हूं कि बहुत लोग ज़ूम में आने के बाद अद्भुत मास्टर्स बने हैं और अद्भुत ज्ञान प्राप्त कर रहे हैं। सही में सिर्फ तीन दिवसीय क्लास होते तब महीने में एक ही बार मिलते थे।

पता नहीं करोना ने किसको कितना बुरा किया है, लेकिन हमारा ज़ूम ध्यान में अद्भुत तरह से आगे बढ़ने का उपयोग हुआ है। इसलिए थोड़ा सा आलसी तत्व को छोड़ने से, बहुत कुछ प्राप्त कर सकते हैं।

भूमि पर कुछ भी असंभव नहीं होता है, सब कुछ संभव है। इसलिए मानव को पतन का कारण आलसी तत्व और निष्क्रियता है। लेकिन अगर उन

दोनों को छोड़ते हैं, मानव उत्तम स्थिति पहुंचने का शक्ति रखता है।

क्योंकि पत्री जी के द्वारा हमें आत्म शक्ति कैसे प्राप्त करना, जान चुके हैं। लेकिन कुछ ही लोग सही साधना सीखे हैं। जब महान व्यक्तियों का इतिहास देखेंगे, हमें समझ आता है कि कितने बड़े कार्यो कर चुके थे।

अगर हम अपना खाली समय को या ध्यान साधना को, या ज्ञान पाने को नहीं उपयोग करेंगे तब हम भी आलसी तत्व में हैं।

हम दोनों आलसी तत्व को छोड़ चुके हैं तभी इस उम्र में भी घूम रहे हैं। अगर आलसी तत्व होता तब हम रेस्ट लेकर सोया हुआ होते। वशिष्ठ महर्षि जी क्या कहते हैं! आलसी तत्व को छोड़कर उत्तम पुरुष प्रयत्न करने पर, भूमि पर कुछ भी हासिल कर सकते हैं।

इसलिए साधकों को आहार लेते हुए, सही व्यवहार करते हुए आलसी तत्व को छोड़कर और ज्ञान पाकर और आगे बढ़ना चाहिए।

कौन सा साधना सही है?

क्योंकि सिर्फ हमारे पी एस एस एम में ही लोगों घंटों तक साधना कर सकते हैं। इतना अच्छा शिक्षा पत्री जी ने दिया है। तब बाद में इतने सारे तरह के ध्यान साधनाएं आये है।

तब इतने सारे ध्यान साधनाएं क्यों आ रहे हैं ? कैसे मालूम होगा सही साधना क्या है? मुझे एक अनुमान रहता था।

तभी मैं एक पुस्तक पढ़ रही थी। अगर जानना है कौन सा सही साधना है मैं ३ पॉइंट्स आपको दे रहा हूं। कौन सा सही ध्यान है? कौन सा अच्छा साधन है? कौन सा हमें उत्तम स्थिति को ले जाता है? आज हम जानते हैं ।

1.जो साधना मनस को प्रशांतता देता है वह ही असली साधना है।

हम जान चुके हैं कि मनस को निष्काम स्थिति में ले जाना ही ध्यान है। ध्यान मतलब, पतंजलि महर्षी ने जो कहा है 'निर्विषय मनः ध्यान'। अगर मानस आलोचना के साथ हैं, तब मनस काम कर रहा है।

अगर देखेंगे मानव दिनभर मन से काम करता ही रहता है और रात को प्रशांतता से सो जाता है। क्यों ? वहां पर मनस काम नहीं करता है, इसलिए वह प्रशांतता से सो जाता है।

तब कौन सा सही साधना है? मतलब 'जो भी मनस को प्रशांतता देता है! वही सही साधना है। यह हमें जानना चाहिए'।

मतलब 'श्वास पर ध्यास' लगाकर बैठने से सारे आलोचनाएं निकलकर मानस को प्रशांतता मिलता है। इसलिए हम जान सकते हैं कि वही सही साधना है।

2. जिस साधना से आपका अरिषडवर्गो नियंत्रण में रहते हैं, वही सही साधना है। : यहां पर अरिषडवर्गो का मतलब काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य है।

मतलब अगर हमें इन अरिषडवर्गो को नियंत्रण में रख सकते हैं वही सही साधना है। क्योंकि इन अरिषडवर्गो मनस संबंधित है। इसलिए अगर

मानस को नियंत्रण में रखते हैं तब यह अरिषडवर्गों भी नियंत्रण में रहेंगे! और मनस को नियंत्रण में रखने के लिए एक ही साधना है, वह है 'श्वास पर ध्यास' ध्यान।

इसलिए 'श्वास पर ध्यास' ध्यान ही सही साधना है।

अगर अरिषडवर्गों नियंत्रण में नहीं रहते हैं, तब क्या अनर्थ है, वह जानते हैं।

1.काम :- देखिए 'काम' मतलब इच्छाएं, अच्छे नहीं है, फिर भी उन्हें नियंत्रित नहीं कर पा रहे हैं। कारण मनस नियंत्रण में नहीं है!

2.क्रोधः- इस प्रकार 'क्रोध' भी नियंत्रण में रहना चाहिए। क्योंकि कहते हैं न, अपना क्रोध ही अपना शत्रु है। अगर यह नियंत्रण में नहीं है मतलब मनस भी नियंत्रण में नहीं है।

3.लोभः- मतलब 'कंजूसी'। मतलब किसी को भी कुछ नहीं देना।

लेकिन जितना है उसी में से देना महानता है। मगर ऐसे नहीं दे पाना मतलब मनस नियंत्रण में नहीं है।

4. मोहः- मतलब हद से ज्यादा ममता होना । वह अपने बच्चों पर, या पति-पत्नी पर, इसके अलावा धन पर भी होता है। कभी-कभी इस ममकार के वजह से अनंत दुख भी होता है। यह भी मनस का नियंत्रण में नहीं रखने से ही होता है!

5. मदः- मद मतलब गर्व। इस मद तीन प्रकार होते हैं। धन का मद, विद्या मद और रूप का मद। यह भी हद से ज्यादा होना गलत है।

यह भी मानस का नियंत्रण में ना रहने से होता है।

6. मात्सर्य :- मात्सर्य मतलब असूय। इससे दूसरों को नष्ट करते हैं, खुद भी नष्ट होता है। यह भी मनस को नियंत्रण में नहीं रहने से होता है! इसलिए 'श्वास पर ध्यास' ध्यान कर कर मनस को नियंत्रण में रखने पर इन अरिषडवर्गों भी उपयोग होते हैं। इसलिए 'श्वास पर ध्यास' ध्यान ही सही साधना है।

3) जिस साधना से 'प्रज्ञानंम ब्र्म्मा' का स्थिति में तुम रह जाते हो, वही अच्छा साधना है। : इसको थोड़ा समझना चाहिए। ज्ञान, बुद्धि संबंधित है। तभी

गुरुओं थोड़ा बुद्धि को विकसित करने को कहते हैं!

इस आध्यात्मिक जीवन में बुद्धि को अच्छी तरह तेज करना है। इसी के लिए साधना है। इससे बुद्धि तेज बनाकर हर एक विषय को जान सकते हैं।

मतलब जो आप पड़े हैं, सुने हैं, उनको बता सकना बुद्धि को चतुर्ता है। लेकिन पत्री जी, बुद्ध भगवान, शंकराचार्य जी कई सत ग्रन्थों दिए हैं। वह उनका प्रज्ञा है। उस ज्ञान अपना आत्मा से बाहर निकलता है।

व्यास भगवान साधना में बैठा है। तब उनके आत्मा से प्रज्ञा बाहर निकला है। इसी प्रज्ञा को ब्र्म कहते हैं।

इसलिए गुरुओं 'प्रज्ञानंम ब्र्मा' के स्थिति में स्थिर रहने को कहते हैं। मतलब आपका साधना कितना तक लेकर जाना है? मतलब आपके अंतरातों से उस प्रज्ञा को बाहर आने तक! यही असली साधना है। ऐसे प्रज्ञानंम ब्र्मा के स्थिति में स्थिर हो जाना चाहिए।

आपके अंदर से, अंतर प्रज्ञा बाहर निकलना चाहिए। और आज तक राघव राव जी 48 किताबें लिखे हैं मतलब उनका अंतर प्रज्ञा ही है। कितना बाहर आ रहा है। हमें भी उस स्थिति तक पहुंचना है।

इसलिए महात्मा लोग क्या कहते हैं? आपका अंतर प्रज्ञा बाहर आने तक आपका साधना रहना चाहिए। तभी प्रज्ञानंम ब्र्मा की स्थिति में आप रहेंगे।

जब से आप जानेंगे आत्मा ही पर ब्र्म है, तब से आत्मा में से निकलने वाला सब कुछ प्रज्ञा ही है।

भगवत गीता को श्री कृष्ण जी ने पढ़कर थोड़ी बताए थे? उसने 700 श्लोक को हमें दिया है।

इसीलिए उत्तम साधना अच्छा साधना वही है जो इस स्थिति देता है। तद अनुसार मनस को प्रशांतता रखकर, इन अरिषडवर्गों को हमारे नियंत्रण में रखकर, प्रज्ञानं ब्र्मा के स्थिति में स्थिर हो जाना।

इन तीनों को जिस साधना में प्राप्त होता है वही उत्तम साधना है। वही बुद्ध भगवान का बोध किया गया 'आनापाना सती' ध्यान। पत्री जी का 'श्वास पर ध्यास' ध्यान ।

आगर आनंद स्थिति में रहना है तो ?

अगर हमें नित्यानंद स्थिति में रहना है तो, 'सत्य' को पकड़ना चाहिए, सत्य को जानना चाहिए। सत्य का मतलब आत्मा। गुरु द्वारा क्या जाने हैं? हम आत्मा हैं, मतलब देवता है। अगर हम ही देवता हैं तब आनंद स्वरूप ही है ना?

तब हम आनंद स्वरूप को भूमि पर आकर दुख में क्यों रहते हैं ? मतलब आनंद को कैसे पाना नहीं जानकर दुख में रह जाते हैं। तब आनंद कैसे पाना है? वह गुरु द्वारा सीखे हैं हम।

अगर आप कौन है जानते हैं तब वही शाश्वत आनंद स्थिति होगा। ऐसे ही आनंद पाने के लिए इस मानव जन्म में आए हैं।

इस मानव जन्म में कुछ जन्मों तमो गुण में, कुछ जन्मों रजोगुण में जीते हैं, अज्ञानता में रहकर, ज्ञान नहीं पाने से जो हम जानते हैं वही सही समझकर, मुझे कोई कहने को कोई जरूरत नहीं है का मूर्खता में कुछ जन्मों तक, अज्ञानता में कुछ जन्मों तक रहकर धीरे से 350 जनों लेने के बाद, सात्विक स्थिति में आते हैं।

तब गुरु आकर आपका दुख और कष्टों का कारण, आपका अज्ञानता ही है कहकर, इस अज्ञानता को छोड़ने के लिए ज्ञान प्राप्त करना है कहते हैं। मगर ज्ञान प्राप्त करना है तो मनस का प्रभाव कम होना चाहिए और आत्मा का प्रभाव बढ़ाना चाहिए।

क्योंकि हम जानते हैं कि हर जीव में आत्मा है। मगर आत्मा रहने पर भी, हम आत्मा को ही प्रामुखता नहीं देकर, मानस को ही प्रामुखता देने से ही, यह सारी दुख होता है। इसलिए मनस का प्रमुखता कम करना चाहिए ।

मनस को मैं और मेरा का अहंकार और ममकार, दो लक्षण रहने पर देवताओं होकर भी जीवों के तरह जी रहे हैं। इस प्रकार मनोस्थिति में रहकर मनस का अवलक्षणों को प्रदर्शित कर कर दुख में रहते हैं।

इस दुख से बाहर निकलना है तो ? आध्यात्मिकता बढ़ाना चाहिए।

इसके लिए पहला कदम सेवा है, दूसरा त्याग है। इन दोनों से ही आध्यात्मिकता में बढ़ते हैं। वेदों में कहा है कि 'त्यागेन अमृतस्य' मतलब त्याग करने से ही अमृत तत्व पा सकते हैं।

तब क्या त्याग देना है? जब हम मनोस्थिति में थे, जो कुछ आदतें रखे हैं, उन सब को छोड़ने पर परमात्मा स्वस्प में रह जाएंगे।

सृष्टि में एक नियम है कि पहले न मरने से दूसरा पैदा नहीं होता है। मतलब एक को त्याग नहीं करने से दूसरा नहीं पा सकते हैं। इसलिए अगर हमें अमृत तत्व स्वरूप बनना है तो मनो लक्षणों को छोड़ने से आत्मा लक्षणों हमें आदत होंगे।

मतलब मनस का सत्व, रजो, तमो गुणों को छोड़ने से, आत्मा का लक्षणों दैविक लक्षणों प्राप्त करेंगे। सहज स्वरूप हो जाते हैं।

इसलिए कौन से गुण को छोड़ने से क्या पाते हैं अभी जानते हैं।

1. क्रूरता नहीं मरने से करूणा नहीं पैदा होगा ।

जब क्रूरता को छोड़ते हो तभी अंदर से करूणा निकलता है। इसीलिए क्रूरता को नहीं छोड़ने से करूणा पैदा नहीं होता है। अगर आप क्रूरता में हैं तब मनस का स्थिति में है। अगर वह छोड़ेंगे भगवान का लक्षण करूणा अंदर से पैदा होता है।

2. द्वेष नहीं मरने तक प्रेम पैदा नहीं होता।

जब सबको द्वेष करते रहते हैं प्रेम पैदा नहीं होता है। द्वेष करने वालों को सब शत्रु ही है, प्रेम करने वालों को सब मित्र ही है। वह प्रेम सहज गुण होना चाहिए। द्वेष का मतलब, देखिए जब हमें ना पसंद वालों को कुछ दुर्घटना होता है या बुरी होता है, हम कहते हैं कि उनको अच्छा हुआ है।

जब आपके अंदर द्वेष है तभी दूसरों को विमर्श करते हो। लेकिन उनके कर्मों को वह अनुभव कर रहा है। उन्हें आप विमर्श करने की जरूरत नहीं है। ऐसे द्वेष नहीं मरने से प्रेम पैदा नहीं होता है। शत्रु को भी जब अपाय में होता है, उसकी रक्षा करने से उनमें प्रेम पैदा होती है।

इसलिए अगर मनुष्य को भगवान बनना है तो, सोचिए कितने अवलक्षणों को छोड़ना है।

3. हिंसा नहीं मरने से अहिंसा पैदा नहीं होता है।

जब से पत्री जी आए हैं इस पीएसएम में सब लोग शाकाहार बने हैं। मतलब बहुत लोगों से हिंसा रूकवाया है। जब हम जीवों के प्रति प्रेम दिखाते हैं, करूणा दिखाते हैं, तब हम हिंसा छोड़ दिया है।

इसलिए पहले हमें हिंसा छोड़ना चाहिए तभी अंदर से अहिंसा नामक अच्छा लक्षण बाहर आएगा।

4. अहंकार नहीं मरने से विनम्रता पैदा नहीं होता है।

अहमः- मैं इतना महान, मैं फलाना, मेरा इतना डिग्री है, मैं बहुत महान हूं, ऐसे जब आप सोचते हो तब आपके अंदर अहंकार है।

इस प्रकार धन बढ़ने पर भी अहंकार को नहीं बढ़ाना चाहिए। जब अहंकार बढ़ता है आत्मज्ञान नहीं होगा।

मैं कर रहा हूं का सोच अहंकार है, आत्मा करवा रहा है का सोच विनम्रता है। तभी कहते हैं अपने अंदर से अहंकार जाने पर विनम्रता पैदा होता है। जब से आप विनम्र पूर्वक हो रहे हो तब आप दैव स्वरूप ही है।

5.अज्ञानता नहीं नष्ट होने तक ज्ञान नहीं होगा।

अगर अपने को शरीर मानता है तब आप अज्ञानता में ही है। मैं आत्मा हूं, इसे केवल सोचना नहीं बल्कि आत्मा जैसे जीते भी हो, तब आप ज्ञानी बन रहे हो।

आत्म शक्ति बढ़ाने को, आत्मा के तरह जीने के लिए, आत्मा अनुभूति पाने के लिए ध्यान साधना करना ही चाहिए !

अगर आप शरीर, और मनस को पकड़ते हो तब आप अज्ञानता में है! लेकिन आत्मा को पकड़ने पर ज्ञान बढ़ रहा है। धीरे-धीरे अज्ञानता को मिटाते हो। इसलिए जब अज्ञानता छोड़ते हो तभी ज्ञान बढ़ता है।

6.शत्रुत्वता को छोड़ने पर ही मित्रता आता है।

सबको शत्रुओं की तरह नहीं देखना है, मित्र के तरह देखना है। उनमें शत्रुत्वता शत्रुत्व देखने से आपको मित्रता नहीं मिलेगा।

देखिए महाभारत युद्ध से पहले श्री कृष्ण जी ने राजी के लिए आया था। अगर युद्ध होगा होने वाला विनाश सुनाया था। लेकिन दुर्योधन ने श्री

कृष्ण का बातें नहीं माना, और युद्ध की तैयारी किया। श्री कृष्ण को शत्रु माना और खुद विनाश हुआ।

इसलिए कहते हैं कि अगर शत्रुत्वता विनाश का मार्ग है। मित्रता उन्नति का मार्ग है, आगे बढ़ने का मार्ग है। इसलिए पांडवों ने श्री कृष्ण जी को मित्र माना और विजय प्राप्त किया है।

इसलिए किसी को भी हमें शत्रु भाव से नहीं होना चाहिए। शत्रुत्वता छोड़ने से ही सब लोग मित्रों के तरह दिखते हैं।

7.स्वार्थ को छोड़ने से ही त्याग का भाव पैदा होता है।

देखिए सिर्फ अपनों के लिए कष्ट करने को स्वार्थ बुद्धि कहते हैं। जब सब अच्छा रहना है, पूरा विश्व अच्छा होना चाहिए का सोच रखकर कष्ट करने को त्याग बुद्धि कहते हैं।

इसलिए जब दूसरों को थोड़ा बहुत सेवा करने पर, उसे त्याग बुद्धि कहते हैं। अगर स्वार्थ में कष्ट करने पर आपका कोई भी बंधु नहीं रहता है। लेकिन त्याग बुद्धि से कष्ट करने पर पूरी दुनिया आपका बंधु लगते हैं।

पत्री जी कहते हैं 'बांटने से ही बढ़ता है'।

त्याग करने से कितना लाभ पाएंगे, उसने बताया है। इसलिए हमें वैसे ही अच्छे गुणों को अपनाना है।

इसलिए कहते हैं 'त्यागेन अमृतस्य'। मतलब जब आप में त्याग गुण होता है तभी आप अमृत स्वरूप बन सकते हो। यह बुरे गुण सब मनस का है। जब मनस का यह सारी बुरी गुणों नष्ट होते हैं, तभी आप आनंद स्वरूप होगा।

जब एक ज्ञानी बनना और बढ़ाना है तब हममें क्रूरता, द्वेष, शत्रुत्व भाव, हिंसा, अज्ञानता यह सारे खत्म होना चाहिए। मतलब मनस का बुराइयों को निकालना चाहिए। इसका एक ही मार्ग है वही 'श्वास पर ध्यास' ध्यान।

जितना कठोर ध्यान साधना करते हैं, उतना ज्यादा मनस का बुराइयों को निकालते हैं। मनस को शुद्ध तत्व में रख सकते हैं। तब आत्मा का सद्‌गुणों को अपनाकर, आत्मा के तरह जीते हुए, आनंद स्वरूप में रहेंगे।

और हम आज क्या छोड़ना है हम जान चुके हैं, क्या-क्या अपनाना है जान चुके हैं। इसलिए हम सब ध्यान करते हैं और सबसे करवाते हैं।

श्री तटवर्ती वीरा राघवराव का हिन्दी किताब

1) आत्म शास्त्र । Rs.200/-
2) ध्यान विद्या । Rs.160/-
3) भगवद् गीता का सार । Rs.160/-
4) एक और जन्म । Rs.160/-
5) सत्य मार्ग । Rs.160/-
6) ‘गाइडिंग’ ध्यान क्यों नहीं ? Rs.120/-
7) भगवान कौन हैं। Rs.120/-
8) कर्म सिद्धांत । Rs.120/-
9) विज्ञान का अर्थ - निहितार्थ Rs.120/-
10) मरने से पहले मरना है। Rs.130/-
11) ब्रह्म ज्ञान। Rs.100/-
12) यह जीवन क्यों हैं ? Rs.100/-
13) मरने के बाद, साथ में आने वाले विषयों ।.. Rs.80/-
14) भागवत के दृश्यों का अर्थ Rs.80/-
15) ज्ञान माला Rs.70/-
16) दुख निवारण का मार्ग Rs.75/-
17) आर्थिक स्थिति बढ़ाना है तो ? Rs.60/-
18) सत्य Rs.50/-
19) क्या हम इस लोक के वासी हैं या परलोक के वासी हैं? Rs.50/-
20) गुरु को पहचानना कैसे ? Rs.50/-

For Books Please Contact :

TATAVARTHI VEERA RAGHAVARAO

BHIMAVARAM. Ph: 94403 09812

वशिष्ठ महर्षि ने चार विषयों कहा है।

1. जिसको विवेक नहीं है, उसे शास्त्र भारी लगता है।

2. जिसको वैराग्य नहीं है, उसे ज्ञान भारी लगता है।

3. जिसे शांति नहीं है, उसे मन भारी लगता है।

4. जिसे आत्मज्ञान नहीं है, उसे शरीर भारी लगता है।

अज्ञानी लोग योग में रखने वाले शरीर को भोग में रखकर शरीर को रोगमय करने से यह शरीर भारी लगता है। लेकिन एक ज्ञानी कोई भी कष्ट आने पर कर्म चले जाएंगे सोचकर, मेरा बाकी खत्म हो रहा है समझ कर, संतोष में कर्मों को अनुभव करता है। इसलिए अज्ञानी को, इस ज्ञान न होने से, इस शरीर भारी लगता है।

श्रीमति तटवर्ति राज्यलक्ष्मी

Rs.70/-